कोंपल

अनुराग ट्रस्ट की
त्रैमासिक पत्रिका

मूल्य : 20 रुपये
प्रवेशांक
जनवरी-मार्च, 2014

जनवरी–फरवरी–मार्च की कुछ महत्वपूर्ण तिथियाँ

1 फरवरी (बसंत पंचमी)

महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की जयन्ती।

5 फरवरी (1919)

चौरी-चौरा काण्ड, जिसमें अंग्रेजों के जुल्म के खिलाफ जनता के बहादुर सपूतों ने बगावत की आवाज उठाते हुए स्थानीय थाने में आग लगा दी थी।

10 फरवरी

महान कवि व नाटककार बर्टोल्ट ब्रेष्ट की जन्मदिवस।

18 फरवरी (1946)

भारतीय नौसेना के बहादुर नौजवानों ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया था जिसे हम नौसेना विद्रोह के नाम से जानते हैं।

19 फरवरी (1673)

महान क्रान्तिकारी वैज्ञानिक कॉपर्निकस का जन्मदिवस। इसे विज्ञान दिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

27 फरवरी (1931)

महान क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आज़ाद का शहादत दिवस।

8 मार्च

अन्तरराष्ट्रीय महिला दिवस

23 मार्च

शहीद दिवस (1931)। शहीदे आज़म भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव ने देश की आज़ादी की खातिर आज के दिन ही हँसते-हँसते फाँसी का फंदा चूम लिया था।

–आज ही के दिन पंजाब के क्रान्तिकारी कवि अवतार सिंह 'पाश' को खलिस्तानी आतंकवादियों ने मार दिया था।

25 मार्च

क्रान्तिकारी पत्रकार, कलम के सिपाही गणेश शंकर विद्यार्थी आज ही के दिन साम्प्रदायिक दंगों को रोकने की कोशिश में शहीद हो गये थे।

29 मार्च

विश्व प्रसिद्ध महान क्रान्तिकारी लेखक मक्सिम गोर्की का जन्मदिवस (1868)।

भारत के प्रथम स्वतंत्रता संघर्ष (1857) के नायक मंगल पाण्डे ने आज ही के दिन विद्रोह का बिगुल फूंका था।

कोंपल

त्रैमासिक, वर्ष 1, अंक 1
जनवरी-मार्च 2014

संस्थापक
(स्व.) कमला पाण्डेय

सम्पादक
गीतिका

सज्जा
रामबाबू

सम्पादकीय कार्यालय
डी-68, निरालानगर
लखनऊ-226020
फोन : 0522-2786782

इस अंक का मूल्य: 20 रुपये
वार्षिक सदस्यता : 100 रुपये
(डाक व्यय सहित)
आजीवन सदस्यता : 2000 रुपये

स्वत्वाधिकारी अनुराग ट्रस्ट के लिए गीतिका द्वारा डी-68, निराला नगर, लखनऊ से प्रकाशित लखनऊ से मुद्रित।
सम्पादन एवं प्रकाशन पूर्णत: स्वैच्छिक तथा अवैतनिक

इस अंक में

हमारी बात

प्यारे बच्चो,

तुम लोगों की प्रिय 'अनुराग बाल पत्रिका' की सम्पादक और हम सबकी प्यारी और आदरणीय कमला पाण्डेय जी के निधन के बाद से हम पत्रिका को जल्दी से जल्दी फिर शुरू करना चाहते थे लेकिन इसकी कानूनी प्रक्रियाएँ पूरी करने में बहुत समय लग गया। पत्रिका के नये पंजीकरण में होती देरी के कारण हमने पिछले वर्ष 'अनुराग बाल बुलेटिन' के रूप में का एक विशेष अंक भी निकाला था। इसके बाद काफ़ी कोशिश करने पर उसी नाम का पंजीकरण नहीं हो पाने पर हमने इसे नये नाम 'कोंपल' के रूप में शुरू करने का निर्णय लिया। जैसाकि तुमने देखा ही होगा, इसका सिर्फ नाम बदला गया है। पत्रिका उसी रूप में निकलती रहेगी जैसे हम लोग कमला जी की अगुवाई में इसे निकाल रहे थे। बेशक, हम इसे लगातार और बेहतर, और सुन्दर, और दिलचस्प बनाने की कोशिश करते रहेंगे।

कमला जी के साथ हमने अनुराग बाल पत्रिका की जो लम्बी यात्रा तय की थी, उसे 'कोंपल' और आगे बढ़ाये, यही हमारी कोशिश है, और हमें पूरा विश्वास है कि तुम सबके प्यार और जुड़ाव के साथ 'कोंपल' बच्चों की सबसे लोकप्रिय पत्रिकाओं में से एक बन जायेगी। इस नये साल की शुरुआत में 'कोंपल' का पहला अंक तुम्हारे हाथों में देते हुए हमें खुशी हो रही है। हमारी कोशिश होगी कि तुम लोगों के इम्तिहान ख़त्म होने तक इसका दूसरा अंक भी तुम्हारे पास पहुँच जाये।

हमें आशा है तुम सबको पत्रिका पसन्द आयेगी। यह तुम्हें कैसी लगी हमें ज़रूर बताना। अपने सुझाव हमें ख़त में लिखकर भेजोगे तो हमें बहुत अच्छा लगेगा।

– तुम्हारी दीदी

भोंबोल सरदार

बहुत दिन पहले की बात है, आश्विन का महीना आधा बीता होगा, एक दिन लड़कों को लेकर पूरे टोले में हो-हल्ला मचा हुआ था। जिसे भी पता चलता उसे पहले तो हैरानी होती और फिर आग बबूला होकर कहता - "इन छोकरों की अब अकल ठिकाने लगानी ही होगी, सारे इलाके को नेस्तनाबूद कर दिया है!"

बड़े-बुजुर्ग इन लड़कों पर विचार करने क लिए इकट्ठे हुए हैं। निधु चक्रवर्ती (महाशय) के कचहरी घर के बरामदे में विचार सभा लगाई गई।

पुआल से छाया हुआ विस्तृत बरामदा; सामने खुला आँगन। उधर बेल तल्ला, इधर सहजन के पेड़, लाल चीते की टट्टी के किनारे-किनारे सुपारी के पेड़ों की कतार। उनमे एक पेड़ के पत्ते सूख गये हैं, फिर भी हवा के साथ दूसरे पेडों से मिलकर वह भी बीच-बीच में अपने मुड़े हुए सर को डोला रहा है।

चक्रवर्ती मोशाय टोले के चौधरी हैं। सभी उनमे त्रस्त रहते हैं। हाथ में हुक्का लिए हृष्ट-पुष्ट तोंद को उजागर कर, एक बड़े जलचौकी पर अपने तशरीफ को फैलाये हुए हैं। बगल में तमाम बुजुर्ग लोग बैठे हुए हैं। और उनके सम्मुख बरामदे के नीचे आंगन में वादीपक्ष और असामी पक्ष दोनों ही हाजिर हैं। केवल असामियों का सरदार भोंबोल लापता है। वादी

पक्ष है – काठगोला के लकड़ी ढोने वाले मजदूर।

वैसे ही चक्रवर्ती मोशाई की आवाज भारी है, उसे और भारी बनाकर उन्होंने लड़कों में से एक को बुलाया – "ऐ टग्रा, इधर आ।"

सब को पता है कि टग्रा सुशील लड़का है, ज्यादा उछल-कूद नहीं करता है। कहीं एक ही जगह बैठे रहना उसे अच्छा लगता है। टग्रा सहमे हुए कदमों से चक्रवर्ती मोसाय के पास आ खड़ा हुआ।
चक्रवर्ती मोशाय के ठीक बगल में ही बैठे हुए थे टग्रा के बाबूजी। शेर की तरह आँख निकालकर उन्होंने टग्रा को देखा।

मजदूरों की ओर इशारा करते हुए चक्रवर्ती मोशाय ने सवाल किया – "ठीक-ठीक बोल, तुम सबने मिलकर इन लोगों की एक नाव डुबा दी है?"

ट्गरा ने कनखी से अपने बाप को देखा, फिर थूक गटककर बोला-नहीं..., हाँ-नाव डूब गई, बस अपने आप ही डूब गई।"

"नाव मगरमच्छ है, या कछुआ कि तैरकर बीच नदी में पहुँचा और गोता लगाकर डूब गया?"

ट्गरा के बाबूजी ने उसे कसकर डाँट लगाई, "झूठ बोलता है? लगता है भोम्ला के संगत में एकदम बरबाद हो गया है!"

चक्रवर्ती मोशाय ने कहा – "रूकिये, अभी सब बात निकलवाते हैं।"

फिर आँख फाड़कार चिल्लाए – "ऐ फेकू, इधर आ!"
'लाल चीता – रक्त चित्रक, एक प्रकार का झाड़ीदार पौधा

फेकू उनका भाँजा था। एक बित्ते का लड़का, एक पैसे मे मिलने वाली बाँसुरी की

तरह पतली आवाज़। उस दिन वह भी भोंबोल के साथ था। चक्रवर्ती मोशाय की ओर देखते ही वह पीं-पीं कर रो पड़ा। रोते-रोते बोला,
"अब नहीं करेंगे मामा!"
–"वह तो बाद की बात है। पहले बताओ हुआ क्या था?"
–"क्या हुआ? नाव डूब गई..."
–"कैसे?"
फेकू कमीज़ चबाते हुए बोला-"कैसे?", भोंबोल भैया... नहीं-नहीं भोम्ला, उसी दिन बायस्कोप में दरियाई डाकुओं की लड़ाई देखकर आया था, सबसे कहा, कल, हम लोग भी पानी में डाकुओं की तरह लड़ाई करेंगे।

पूछा – "जहाज कहाँ से मिलेगा?"
भोंबोल भैया बोला-"जहाज़ की परवाह कौन करता है? काठ गोला के मज़दूरों का नाव लेकर

लड़ेंगे।"

इसीलिए तो आज हम लोग बीच दरिया में जाकर दो नाव में सवार, दो दल की तरह लड़ाई कर रहे थे – इसी बीच......

इतना ही कहकर फेकू हँस पड़ा। बाकी लड़कों में भी दबी हुई हँसी की लहर फैल गई।

इन लोगो को हँसता देखकर चक्रवर्ती मोशाय की भौंह और चढ़ गई।

दत्त साहब लाठी उठाकर हुंकार छोड़े – "फिर हँसी? चुप, सब चुप!! जानते हो, तुम लोगो ने कितना गलत काम किया है?"

चक्रवर्ती मोशाय बोलें – "फिर,?"

–"फिर? फिर, भोंबोल भैया...नहीं भोम्ला हम लोगों के नाव से टग्रा के नाव में बैठा मानिक को लग्गी से जैसे ही ठेलने गया, बस उस नाव पर सवार बोदे ने लग्गी को पकड़कर ऐसा खींचा न कि एक ही बार में समूचा नाव को पलट दिया!"

"और, उस नाव पर जो लड़के थे, उन सबका क्या हुआ?"

"वे सब नाव छोड़कर पानी में कूद गये और तैरने लगे। हम लोगों में से कई तैरकर नाव पर चढ़ गए।"

"भोम्ला?"

वह नहीं चढ़ा (बोला,"हम कप्तान हैं। जब तक मेरी फौज के सभी लोग बच न जाए, मैं नहीं चढूँगा।"

वह लालू और मोंगला के साथ तैरकर मछुआरा टोला के घाट पर चढ़ गया।

हारान चाकी से रहा नहीं गया, बोल पड़े – ऐंह खास एडमिरल तोगो आये हैं, नाव पर नहीं चढ़ेगे बरसात से भरी हुई नदी, चारो ओर हू-हू करता हुआ पानी..., मगरमच्छ से दरिया भरा हुआ है- पर महामहिम नहीं चढ़ेंगे, कैसा भयानक पाजी! आज आए न घर...मार कर..." कहते-कहते आवेश में आकर उन्होंने भोंबोल के लिए, हवा में ही एक जोरदार तमाचा जड़ दिया।

भोंबोल उनका भतीजा था। उसकी न माँ थी, न ही बाप।

उस दिन सभा वही मुलतबी हो गयी। चक्रवर्ती मोशाय मज़दूर लोगों से बोले....

"तुम लोग कल आना। असल दुष्ट तो अभी भागा हुआ है, पहले उसे पकड़ें।" फिर लड़कों की ओर नज़र डालकर डाँट लगाये- "तुम लोग जाओ, हिसाब बनाओ। हर एक को डेढ़-डेढ़ सौ सवाल बनाना है।"

शाम के चार बज रहे थे। रेल लाइन से सटे जुगी टोला के मैदान में उस शाम उन लोगो का एक फुटबॉल मैच होने वाला था। विपक्ष में

थाना टोला के लड़के थे। कसाई घर से चर्बी खरीदकर बॉल पर अच्छे से लगाई गई थी, ब्लाडर के तीनों लीक साल्यूशन से बंद कर दिया गया था पर, अब सब चौपट। सभी शांत-सीधे बच्चे की तरह अपने-अपने घर की ओर चल पड़े। अब उनसब का सारा गुस्सा सरदार से था। उसी के कारण सबको ऐसी सजा मिली थी। खुद सारा तमाशा खड़ा करके, अब भाग गया। पर किये की सजा तो मिलनी ही है।

यह इलाका असल में एक छोटा सा शहर था। उत्तर में नदी, दक्षिण में रेल लाइन। लेकिन शहर के बीच में, जहाँ-तहाँ बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ ..., ठीक गाँव की तरह। साँझ ढलते ही हर दिशा से सियार की चीख, झींगुर की झंकार और साथ-साथ जुगनू के झुण्ड उड़ते हुये अँधियारे में रोशनी की फुहार उड़ाने लगते हैं। पर बाज़ार अच्छा खासा बड़ा है मारवाड़ी लोग बड़े-बड़े आरा मशीन लगा रखे हैं। उस पार से रोज मज़दूर लोग नाव से होकर इन आरा मशीनों में काम करने आते हैं और फिर उसी नाव से शाम को लौट जाते हैं। दिन भर नावें सब घाट में बँधी रहती हैं। हर साँझ उन नावों से मजदूरों की सारी-गान की आवाज आती है, और साथ साथ पानी में लग्गी के थपेड़ों का संगत-झप्-झप्, झप्-झप्।

(क्रमशः)

अगले अंक में - अंधेरे में

खगेन्द्र नाथ मित्र - पिछले सदी के जनप्रिय बांगला कथाकार। साहित्य कृतियों की शुरुआत वयस्कों के लिए छोटी कहानियाँ लिखने के साथ हुई पर इनकी अधिकांश रचनाएँ बच्चों और किशोरों के लिए है। "भोंबोल सरदार" उनकी एक अविस्मरणीय रचना है। इस किताब के पहले दो खंड का अनुवाद रूसी भाषा में हुआ है। और एक समय वह वहाँ के स्कूलों में सातवीं और आठवीं कक्षाओं में द्रुत पाठ के रूप में पढ़ी जाती थी।

उज़्बेक लोककथा

मालिक और मज़दूर

एक समय की बात है दो भाई रहते थे। वे बहुत ग़रीब थे। उन्होंने यह तय किया कि बड़ा भाई किसी अमीर खेत मालिक के यहाँ मज़दूरी करेगा और जो कमाई होगी उसे घर भेज देगा। छोटा भाई घर पर रुक गया और बड़ा एक अमीर आदमी के यहाँ जाकर मज़दूरी करने लगा। यह क़रार हुआ कि बसन्त तक, उस समय तक, जब तक कोयल की पहली कूक सुनाई न दे, उसे वहाँ काम करना होगा, पर मालिक ने उसके साथ एक और शर्त भी जोड़ दी।

"इस दरमियान अगर हम दोनों में से कोई भी एक-दूसरे पर नाराज़ होगा तो उसे जुर्माना भरना पड़ेगा। यदि तुम मुझसे गुस्सा हुए तो तुम्हें एक

हज़ार रूबल मुझे देना पड़ेगा और यदि मैं तुमसे नाराज़ हुआ तो मैं तुम्हें एक हज़ार रूबल दूँगा।"

"लेकिन मेरे पास इतना पैसा नहीं है!" बड़ा भाई चिल्ला उठा।

"इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। हारने पर यदि तुम जुर्माना नहीं भर पाये तो तुम्हें बिना मज़दूरी के मेरे लिए दस साल तक काम करना होगा।"

पहले तो उसने सोचा कि वह मना ही कर दे फिर उसके मन में यह विचार आया। "कुछ भी हो जाये मैं अपने आप पर क़ाबू रखूँगा और गुस्सा करूँगा ही नहीं। और अगर कहीं मालिक को गुस्सा आ गया तब तो उसे हज़ार रूबल मुझे देने ही पड़ेंगे। मेरा भला क्या नुकसान हो सकता है?"

और उसने शर्त मान ली।

अगले दिन तड़के ही मालिक ने उसे खेत में काम करने भेजा।

उसने कहा, "हँसिया ले लो और वहाँ जाकर तब

तक कटाई करो जब तक उजाला रहे।"

मज़दूर पूरा दिन खेत में खटता रहा और शाम को बिल्कुल बेदम होकर घर लौटा।

मालिक ने उससे पूछा, "तुम इतना जल्दी कैसे लौट आये?"

"यह आप क्या कह रहे हैं? दिन ढल चुका है।"

"हाँ, तो क्या हुआ? क्या मैंने तुमसे यह नहीं कहा था कि जब तक उजाला रहे तब तक काम करते रहना है? सूरज डूब गया लेकिन चाँद तो निकल आया था और काम करने लायक़ पर्याप्त उजाला तो था ही वहाँ।"

"तो क्या आपका मतलब है कि मैं कभी आराम ही न करूँ?" मज़दूर चिल्लाया।

"अच्छा, अच्छा – तो क्या तुम नाराज़ हो रहे हो!"

"अरे नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं। बात बस इतनी सी है कि मैं बहुत थक गया हूँ... बस थोड़ी देर आराम करूँगा और फिर खेत पर काम करने चला जाऊँगा।"

वह पूरी रात काम करता रहा जब तक कि चाँद ढल नहीं गयां पर तब तक सूरज फिर उग आया था। काम करते-करते वह बेचारा निढाल होकर गिर पड़ा और मालिक को भला-बुरा कहने लगा।

"अगा लगे तुम्हारे खेत को, गाज़ गिरे तुम्हारे खाने और तुम्हारे पैसों पर" वह जोर से चिल्लाया।

ठीक उसी समय मालिक आ पहुँचा और उससे बोला, "तो तुम्हें गुस्सा आ गया है। हमारे बीच के क़रारनामे को भूलो मत। अब या तो तुम मुझे एक हज़ार रूबल दो या दस सालों तक बिना मज़दूरी मेरे लिए काम करो।"

बेचारा मज़दूर सोच नहीं पा रहा था कि वह करे

तो क्या करे। उसके पास फूटी कौड़ी भी नहीं थी लेकिन ऐसे निर्दयी मालिक के लिए वह इस तरह काम नहीं करता रह सकता था। अन्त में, उसे एक ऐसे कागज़ पर हस्ताक्षर करना पड़ा जिमें यह लिखा हुआ था कि उसे अपने मालिक को एक हज़ार रूबल देने हैं। वह खाली हाथ घर लौट आया।

छोटे भाई के वहाँ का हाल पूछने पर उसने सारी बात कह सुनायी।

''चलो, छोड़ो उसे। परेशान मत हो,'' छोटा भाई बोला। ''अब तुम घर पर रहना मैं काम ढूँढने जा रहा हूँ।'' छोटा भाई उसी खेत मालिक के पास पहुँचा जहाँ उसके बड़े भाई ने काम किया था। मालिक ने उसके साथ भी वही शर्तें रखीं। यदि मज़दूर नाराज़ हो जाता है तो उसे मालिक को एक हज़ार रूबल देना होगा या मालिक के लिए बिना मज़दूरी उसे दस साल तक काम करना होगा। और यदि मालिक गुस्सा होता है तो उसे मज़दूर को एक हज़ार रूबल देने होंगे और उसे जाने की आज़ादी देनी होगी।

''नहीं, यह काफ़ी नहीं,'' छोटे भाई ने कहा। चलिए हम इसे दो हज़ार रूबल रख लें यदि आप मुझसे नाराज़ होते हैं तो आप मुझे देंगे और यदि मैं आपसे नाराज़ होता हूँ तो मैं आपको दो हज़ार रूबल दूँगा या फिर 20 सालों तक आपके लिए काम करूँगा।''

''पक्का।'' मालिक बेसब्री से चिल्ला उठा और फौरन उसे अपनी सेवा में नियुक्त कर लिया। अगले दिन सूरज काफ़ी ऊपर तक चढ़ आया था लेकिन मालिक ने देखा कि मज़दूर अभी भी गहरी नींद में सो रहा हैं

''फौरन उठ जाओ! दोपहर होने को है और अभी तक तुम काम पर नहीं गये!''

''क्या आप नाराज़ हो रहे हैं?'' अचानक आँख खोलकर मज़दूर ने पूछा।

''नहीं, नहीं, बिल्कुल भी नहीं।'' मालिक जल्दी से बोल पड़ा। ''मैं तो बस यह कह रहाथा कि अब तुम्हें खेत पर जाना चाहिए। कटाई शुरू करने का समय हो गया है।''

''अरे, उसके लिए अभी काफ़ी समय पड़ा है,''

मज़दूर अलसाया हुआ पड़ा रहा।
अन्त में वह किसी तरह से उठा और फिर धीरे-धीरे आराम से अपना जूता चढ़ाने लगा।
"क्या तुम जरा जल्दी नहीं कर सकते?"
"क्या हुआ, क्या तुम्हें गुस्सा चढ़ रहा है?"
"नहीं, नहीं – मैं तो सिर्फ़ यह कहना चाहता था कि कि तुम्हें काम पर जाने में देर हो जायेगी।"
ओह, फिर तो कोई बात नहीं। पर आपको हम लोगों के बीच का क़रार याद है न – आपको उसे पूरा करना पड़ेगा, यह आप समझते हैं न।"
मज़दूर तैयार होकर जब खेत पहुँचा तब तक दोपहर हो चुकी थी। फिर वह कहने लगा, "अब काम करने से भी क्या फ़ायदा? काफ़ी देर हो चुकी है। देखो तो, सभी लोग दोपहर का खाना खा रहे हैं हम लोग भी खा लेते हैं।"
वे खाने के लिए बैठ गये। खाने के बाद मज़दूर बोला, "मैं कामकाजी आदमी हूँ। मुझे अपनी ताक़त बनाये रखने के लिए एक हल्की-सी झपकी की ज़रूरत पड़ती है।" यह कहकर वह सोने चला गया और शाम तक सोता रहा।
"ए, उठ! क्या तुझे जरा भी शर्म नहीं?" मालिक उसे झकझोरते हुए चिल्लाया। "हमारे सभी पड़ोसियों ने अपनी खेतों में कटाई कर ली है जबकि हमारा खेत जस का तस पड़ा है। कैसा मज़दूर है तू!"
"लगता है इस बार आप सचमुच नाराज़ हो गये हैं।" मज़दूर सिर उठाते हुए बोला। "नहीं तो, मैं जरा भी नाराज़ नहीं हूँ। मैं तो तुमसे यह कह रहा था कि अब घर जाने का समय हो गया है।"
"चलिए ठीक है, फिर तो कोई बात नहीं। तो अब हमें घर चलना चाहिए।"
घर पहुँचने पर मालिक ने देखा कि एक मेहमान उसका इन्तज़ार कर रहा है। मेहमान की खातिरदारी के लिए उसने मज़दूर से एक भेड़ काटने के लिए कहा।
"कौन-सी भेड़ काटूँ?" मज़दूर ने पूछा।
"जिसे भी तुम पकड़ सको," मालिक बोला।
मज़दूर वहाँ से निकल आया। थोड़ी ही देर बाद सारे पडोसी दौड़ते हुए मालिक के पास आये और कहने लगे "तुम्हारा नौकर पगला गया है। तुम्हारी सारी भेड़ों को वह काटे डाल रहा है।"
मालिक भागकर बाहर पहुँचा और पाया कि भेड़ों के पूरे के पूरे झुण्ड वहाँ कटे हुए पड़े हैं।
"नामुराद, यह तूने क्या किया?" वह चीख पड़ा। "तूने मुझे बरबाद कर दिया! तुझ पर खुदा की मार पड़े।"
"परन्तु आपने तो खुद ही मुझसे कहा था कि मैं जिसे भी पकड़ सकूँ मार डालूँ और मैंने सभी पकड़ लिये थे," मज़दूर ने मुँहफट होकर जवाब दिया। "कहीं ऐसा तो नहीं कि आप नाराज़ हो गये हैं।"
"नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं। मैं तो इस बात से बस दुखी हुआ हूँ कि तुमने मेरे सारे भेड़ों को मार डाला।"

''तब तो ठीक है। यदि आप मुझसे नाराज नहीं हुए हैं फिर तो मैं आपके लिए काम करता रह सकता हूँ।'' मज़दूर अगले कुछ महीनों तक काम करता रहा और अपनी चालबाजियों से उसने मालिक के नाक में दम कर डाला। आखिरकार तंग आकर उसके मालिक ने उससे छुटकारा पाने का निश्चय किया।

क़रारनामे की शर्तों के अनुसार मज़दूर को वहाँ तब तक रहना था जब तक जंगल में कोयल की पहली कूक न सुनायी दे। मालिक ने निश्चय किया कि वह इसी शर्त का फ़ायदा उठायेगा। परन्तु जाड़ा शुरू ही हुआ था और कोयल की कूक सुनने में अभी काफ़ी वक्त था। अतः वह अपनी पत्नी को लेकर जंगल में पहुँचा। उसने उसे पेड़ पर चढ़ा दिया और उससे बोला कि वह वहाँ बैठी रहे और उसी तरह आवाज़ निकाले जैसे कि कोयल कूकती है। फिर वह घर वापस आकर मज़दूर से बोला कि वे दोनों साथ-साथ जंगल में शिकार करने जायेंगे।

जैसे ही वे जंगल में घुसे मालिक की पत्नी कोयल की आवाज़ में बोलने लगी ''कुहू! कुहू!'' मालिक मज़दूर की तरफ़ मुड़ा और कहने लगा, ''मुबारक हो! यह तो कोयल की पहली कूक है। अब तुम फिर से आज़ाद हो गये हो।

मज़दूर ने सारी चालाकी भाँप ली। उसने कहा, ''नहीं,' यह कैसे हो सकता है कि कोयल के कूकने की आवाज़ जाड़े की शुरुआत में ही सुनायी दे जाये? लगता है कि यह कोयल अद्भुत क़िस्म की है। मैं निशाना लगाकर उसे मार गिराने जा रहा हूँ फिर उसका अच्छी तरह से मुआइना करके देखूँगा।''

यह कहते हुए उसने बन्दूक़ निकाली और उस पेड़ पर निशाना साधा जिस पर मालिक की पत्नी बैठी हुई थी।

मालिक मज़दूर पर झपट पड़ा और उससे बन्दूक़ छीनने की कोशिश करने लगा। ''मक्कार, लुटेरा कहीं का, मैं आजिज आ गया हूँ तेरी बदमाशियों से, अब और नहीं बर्दाश्त कर सकता मैं!''

''अरे वाह, अब तो आपको यह मानना ही होगा कि आखिरकार आपको सचमुच ही गुस्सा आ गया है, मज़दूर बेसब्री से चिल्ला उठा।

''हाँ, हाँ, मैं गुस्से में हूँ, मैं मानता हूँ,'' मालिक ने कहा। चलो मेरे साथ, मैं तुम्हें तुम्हारा दो हज़ार रूबल दे दूँ, बस तुम यहाँ से चलते बनो और मुझे शान्ति से रहने दो। उस पुरानी कहावत का मतलब अब मैं ठीक से समझ गया हूँ, ''कभी दूसरों के लिए गड्ढा मत खोदो, तुम ख़ुद भी उसमें गिर सकते हो।''

और दो हज़ार रूबल लेकर छोटा भाई घर लौट आया।

अनुवाद : मीनाक्षी

त्स्वाना कथा

सर्वल और कछुआ

बात बहुत पुरानी है। एक कछुआ खरामे-खरामे अपने घर की ओर चला जा रहा था कि रास्ते में उसकी मुलाक़ात एक सर्वल से हो गई।

सर्वल ने गर्मजोशी से पूछा, ''बोल यार, आज तुझे छककर खाने को मिला या नहीं?''

कछुआ उदासी से बोला, ''नहीं यार, आज तो फाका ही रह गया।।''

सर्वल धमाचौकड़ी करने लगा। हँसी से उसका बुरा हाल हो रहा था। उसे एक ख़ुराफात सूझी। उसने कछुए से कहा, ''यार, तू मेरे पीछे-पीछे आ। जब तक तू आयेगा तब तक घर पहुँचकर मैं तेरे लिए खाना तैयार कर रखूँगा।''

कछुए को तो माँगी मुराद मिल गई। उधर सर्वल मुड़ा और मजे से चौकड़ी भरता उस पगडण्डी पर बढ़ निकला जो उसके घर को जाती थी।
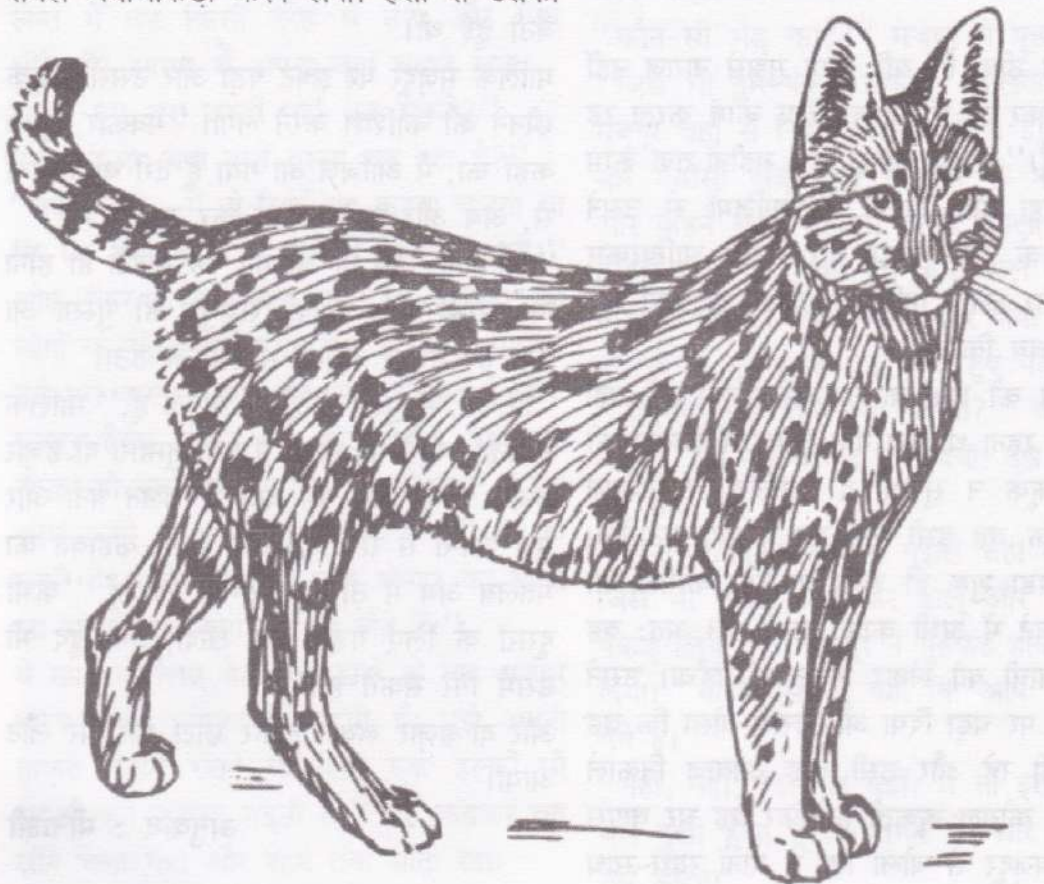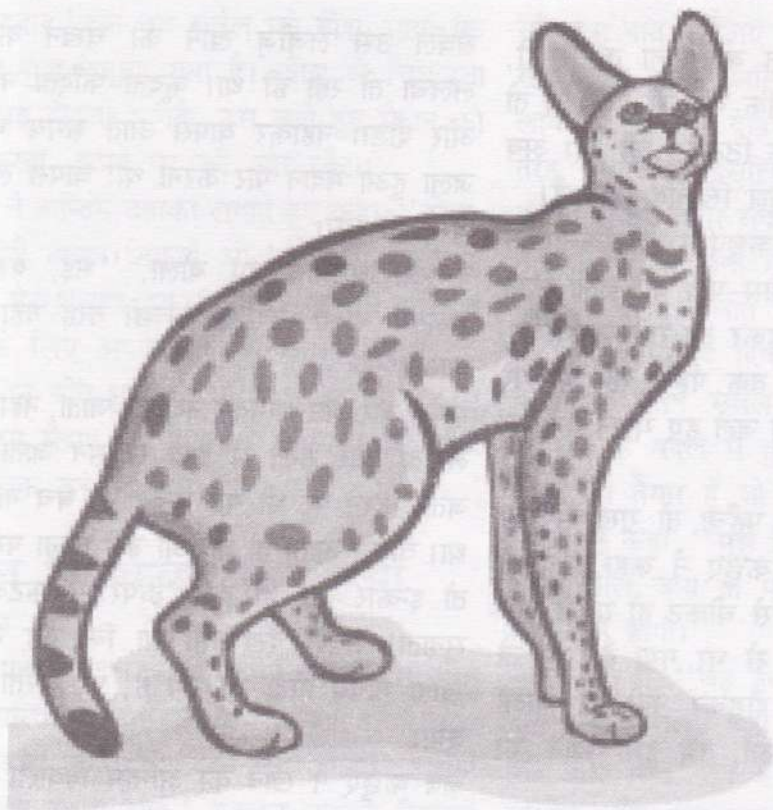
इधर कछुआ जी तोड़ रफ़्तार से उसके पीछे चलने लगा। पर कछुआ तो कछुआ ठहरा। लाख कोशिश करने पर भी उससे तेजी से चला ही नहीं जा रहा था। पहाड़ी की चढ़ाई पर तो वह रेंगने-सा लगा। वह थकान से चूर-चूर हो गया पर तर माल की उम्मीद में वह जैसे-तैसे घिसटता हुआ चलता रहा।

अन्त में जब कछुआ उस चट्टे पर पहुँचा जिसे सर्वल अपना घर कहता था तो पाया कि सर्वल मन ही मन हँस रहा है। उसकी नज़र कछुए पर पड़ी नहीं कि उसने खिझाते हुए कहा, "भलेमानस, तूने तो जुग बिता दिए!"

कछुए ने हाँफते हुए कहा, "माफ करना, भाई! लेकिन तुम्हें रसोई पकाने के लिए पूरा समय भी तो मिल गया, इसलिए इसमें इतना बुरा मानने की भी कोई बात नहीं।"

सर्वल बोला, "हाँ, सो तो है।" उसने अपने घर के ऊपर लटक रही डालियों की ओर इशारा करके हँसकर कहा, "लो, यह रहा तुम्हारा भोजन।" बेचारा कछुआ उन ऊँची डालियों को देखता रह गया। वह उन तक पहुँच तो सकता नहीं था।

सर्वल को इस छेड़खानी से बड़ा मजा आया। वह हँसता हुआ वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गया। बेचारा कछुआ कर भी क्या सकता था। वह धीरे-धीरे घिसटता-खिसकता अपने घर की ओर चला। वह सोचता जा रहा था, चलो आज जैसी भी बीती, कल ज़रूर भरपेट खाने को मिलेगा। उसके मन में बदले की आग भी सुलगने लगी। इसके कई हफ़्ते बाद, कछुए ने सर्वल को दावत का न्योता भेजा। सर्वल को हैरानी तो हुई पर

उसने सोचा कछुआ दिल का भला तो है ही, उसने समझ लिया होगा कि मैंने बुरे इरादे से तो कुछ किया नहीं था। एक ठिठोली की थी। अब चलकर देखता हूँ वह मुझे खिलाता क्या है।

यह सूखे का मौसम था। कछुए ने नदी किनारे के अपने घर के पास के घास-पात को जला दिया था। कछुए के घर से उड़कर आ रही ज़ायकेदार, रसोई की खुशबू सर्वल तक पहुँच रही थी पर वहाँ पहुँचने से पहले उसे जले हुए मैदान को पार करना था।

जब वह कछुए के घर पहुँचा तो राख से सन चुका था। उसे देखकर कछुए ने कहा, ''देखते नहीं, तुम्हारे पंजे गन्दगी से चीकट हो रहे हैं और सारा शरीर काले धब्बों से भर गया है। तुम तो बहुत फूहड़ हो, यार! दौड़कर नदी पर जाओ और नहाकर वापस आओ, तब तुम्हें खाने को मिलेगा।''

सर्वल उस लज़ीज़ खाने को चखने के लिए ललचा तो रहा ही था। कूदता-फाँदता नदी की ओर दौड़ा। नहाकर वापस आते समय भी उसे जला हुआ मैदान पार करना था। वापस लौटा तो जस का तस।

कछुआ घुड़कते हुए बोला, ''भई, यह नहीं चलेगा। जाओ, नदी में अच्छी तरह नहा-धोकर आओ!''

सर्वल बार-बार भागकर नदी पर जाता, नहा-धोकर लौटता और रास्ते में राख से सन जाता। लाख जतन करने पर भी वह गन्दगी से बच नहीं पाता था। वापस आता तो कछुआ उसे खाना परोसने से तो इन्कार कर ही देता, ऊपर से फटकार भी सुनाता। सर्वल देख रहा था कि वह स्वादिष्ट खाना ग़ायब होता जा रहा है, पर करता भी तो क्या।

जब कछुए ने खाने का अन्तिम निवाला गले के
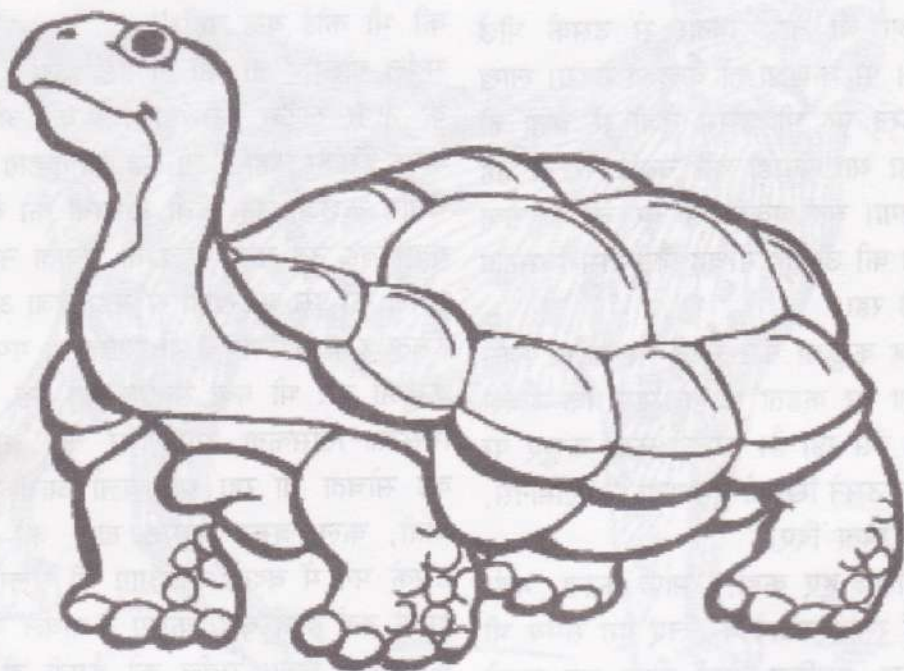
नीचे उतार लिया तब सर्वल को होश आया कि उसको बुद्धू बनाया गया है। खीझ से चिंघाड़ता हुआ वह दौड़ता भागता, उस जले हुए मैदान को पार करता, अपने घर की ओर लौटा।

कछुए ने अन्तिम ठहाका लगाते हुए कहा, "दोस्त, अब तेरी अक्ल ठिकाने आ गयी होगी। कछुआ अपना पेट भरकर डकार लेता हुआ चैन की नींद लेने के लिए अपने खोल में सिमट गया।

इतने दिन बीत गये पर सर्वल के शरीर पर उस जले हुए मैदान की राख के कारण काले धब्बे आज तक बने रह गये हैं।

सर्वल चितकबरा कैसे हुआ

(न्देबेल कथा)

पहले-पहल सर्वल के शरीर का रंग भी शेर जैसा ही केसरिया था। वह शेर के मुक़ाबले इतना छोटा और दुबला तो था ही, दूसरे, सारे जानवर उसको "शेर का ममेरा भाई" कहकर उसकी खिल्ली उड़ाते रहते।

सर्वल सोचता रहता, काश, मेरे पास भी लकड़बग्घे या जेब्रा जैसे शानदार चितकबरे बाल होते। वह बड़ा या ताक़तवर नहीं हो सकता तो कोई हर्ज नहीं, पर देखने में सजीला तो होना ही चाहिए।

एक दिन जब सर्वल अपने शिकार पर निकला हुआ था, उसकी मुलाक़ात एक साँप से हो गई। सर्वल को देखकर वह बोला, "ओ दयालु सर्वल, मेरी तबियत बहुत ख़राब है। दूसरा कोई जानवर मेरी मदद करने तो आयेगा नहीं।"

सर्वल ने कहा, "इसमें हैरानी की तो कोई बात नहीं। तुम हो ही इतने बुरे कि सारे जानवर तुमसे डरते रहते हैं। लेकिन तुम बीमार हो इसलिए मैं सिर्फ़ इस बार तुम्हारी मदद करने को तैयार हूँ। लेकिन तुम अपने जहरीले दाँतों को जरा सँभाले रहना।"

साँप इस बात के लिए तैयार हो गया कि वह पूरा साधु बना रहेगा इसलिए सर्वल उसे अपने घर लाया और उसकी देखभाल करता रहा। साँप बुरी तरह बीमार था इसलिए उसे चंगा होने में भी काफ़ी समय लगा। सर्वल की सेवा-टहल का ही नतीजा था कि अन्त में वह चंगा हो गया।

साँप ने चलते-चलाते सर्वल को उसके उपकार के लिए धन्यवाद दिया। अपनी कृतज्ञता जताने के लिए उसने सर्वल से कहा, "तुम्हारे इस उपकार के बदले मैं तुम्हारे लिए ऐसा कुछ भी करने को तैयार हूँ जो मेरे वश में हो।"

सर्वल ने कहा, "मुझे किसी तरह एक ख़ूबसूरत खाल मिल जाये तो मेरे लिए इससे बड़ी कोई बात नहीं होगी।"

साँप ने कहा, "वह तो मैं अभी कर सकता हूँ। देखो, इसके लिए मुझे तुम्हें डँसना होगा। डरने की कोई बात नहीं है। मैं तुम्हें बहुत धीरे-से काटूँगा और एक-एक बार में बहुत थोड़ा-सा ज़हर निकालूँगा। इससे तुम्हें कोई नुकसान नहीं होगा।"

सर्वल तैयार हो गया। साँप ने उसे जगह-जगह थोड़ा-थोड़ा डँसा। उसे थोड़ी तक़लीफ़ तो हुई पर जल्द ही होश में आ गया। उसके बाद उसके शरीर पर चकत्ते उभर आये और उसके केसरी बालों का रंग सुनहरा हो गया और उसमें जगह-जगह काले धब्बे बन गये। सर्वल की ख़ुशी का तो कोई ठिकाना न रहा। अब वह जंगल के सबसे ख़ूबसूरत जानवरों में से एक हो गया।

वह दिन और आज का दिन, सर्वल और साँप एक-दूसरे का इतना लिहाज करते हैं कि वे एक-दूसरे को कभी तंग नहीं करते।

सर्वल के बारे में कुछ बातें

प्रजाति :

सर्वल (फेलिस सर्वल)

निशाचर और अक्सर अकेले विचरने वाला प्राणी।

	नर	मादा
ऊँचाई	60 सेमी	60 सेमी
वजन	11 किग्रा	9 किग्रा
जन्म के समय वजन	250 ग्रा	250 ग्रा
दूध छोड़ने का समय	6 माह	6 माह
जवान होने की उम्र	2 साल	2 साल
गर्भकाल	72 दिन	
बच्चों की संख्या	2-4	
आयु	12 वर्ष	12 वर्ष

लक्षण : सर्वल बिल्ली परिवार का एक खुशनुमा सदस्य है। इसके बाल मुलायम और चिकने होते हैं। अपने काले धब्बों और पट्टियों के कारण यह देखने में बहुत सुन्दर लगता है। इसके पाँव लम्बे, गर्दन लम्बी, कान गोलाई लिए हुए और सिर छोटा-सा होता हैं इसकी पूँछ छोटी होती है। इसकी लम्बाई इसके सिर से पुट्ठे तक की लम्बाई की आधी होती है।

निवास : सर्वल अपने प्राकृतिक निवास की ज़रूरतों के अनुसार बँधे रहते हैं। इनके लिए पानी के एक निश्चित स्रोत का होना ज़रूरी है इसलिए ये अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक पाये जाते हैं। सर्वल को ऊँची घास, कास या नरकुल का चप्पा भी चाहिए जिसमें वे दिन के समय आराम करते हैं।

आदतें : यूँ तो सर्वल रात को ही बाहर निकलते हैं पर कभी-कभी इन्हें भोर या सझौंती के समय भी देखा जा सकता है। ये आम तौर पर अकेले ही घूमते हैं, पर ऋतुकाल में नर-मादा का जोड़ा कुछ समय के लिए साथ घूमता और साथ शिकार करता है ओर नन्हें छौने माँ के साथ बहुत लम्बे
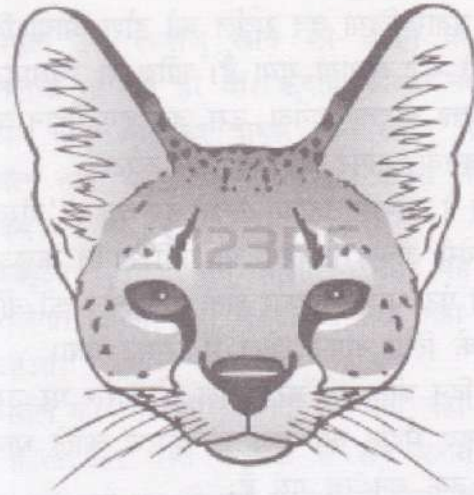
समय तक लगे रहते हैं।

दूसरे माँसभक्षी जानवरों की तरह सर्वल का अपना लगभग पाँच वर्ग किलोमीटर का एक छोटा-सा इलाका होता है। इस छोटे-से घरेलू क्षेत्र में यह एक बँधे हुए मार्ग या पगडण्डी को ही पकड़कर चलता है। यह अपने इस मार्ग पर जगह-जगह बीट करता जाता है। यही इसके इलाके की चौबन्दी है।

खुराक : सर्वल के आहार में अनेक तरह के शिकार आते हैं। सर्वल किसानों के मददगार हैं क्योंकि ये मुख्तया दंतुर प्राणियों का शिकार करते हैं। इनके आहार का 75 प्रतिशत यही होता है। खाने को तो ये चिड़िया, सरीसृप, कीड़े-मकोड़े, उभयचारी (जल-थल चारी) जीवों और बिच्छू तक को खा जाते हैं।

जनन : मादा बरसात के मध्यकाल में या उतार पर बच्चे जनती है जब घास खूब घनी होती है। वह एक साथ दो-तीन बच्चे या तो किसी घनी घास में या झाड़ी-झुरमुट में जनती है। नवजात छौनों के शरीर पर मुलायम रोएँदार खाल होती है जिसका रंग जवान सर्वल की तुलना में अधिक भूरा होता है।

विज्ञान

सूर्य : एक सामान्य तारा

गुणाकर मुले

हमारी पृथ्वी और दूसरे ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। हमारे लिए सूर्य का बड़ा महत्व है। इसीलिए सूर्य को एक देवता माना गया था। पर खगोल विज्ञान की दृष्टि से सूर्य एक तारा है, एक सामान्य तारा।

पृथ्वी के किसी भी स्थान पर खड़ा व्यक्ति रात के समय, दूरबीन की सहायता के बिना, आकाश में लगभग तीन हज़ार तारे ही देख सकता है। लेकिन दूरबीनों से आकाश में बहुत-से तारे देखे जा सकते हैं। ये सारे तारे एक योजना के सदस्य हैं। तारों की इस योजना को हम आकाश गंगा कहते हैं।

आकाशगंगा शब्द पुराना है। आकाश में तारों से भरा हुआ एक पट्टा दिखाई देता है। यह पट्टा नदी की तरह दिखाई देता है, इसलिए इसे आकाश गंगा नाम दिया गया था। दरअसल, आकाशगंगा नदी के आकार की नहीं है। यह एक विशाल पहिए के आकार की योजना है। इस आकाशगंगा में क़रीब 150 अरब तारे हैं। हमारा सूर्य इन 150 अरब तारों में से एक सामान्य तारा है।

आकाश के तारे हमसे बहुत दूर हैं। इसलिए आकाशगंगा भी बहुत बड़ी है। आकाशगंगा के आकार-प्रकार को किलोमीटर में बताने में बड़ी कठिनाई होती है, इसलिए खगोलविदों ने एक नया पैमाना खोज निकाला है। यह है प्रकाश के वेग का पैमाना।

प्रकाश की किरणें एक निश्चित वेग से दौड़ती हैं। इस बात की जानकारी लगभग दो सौ साल पहले ही मिली है। गैलीलियो और न्यूटन जैसे महान वैज्ञानिक भी प्रकाश के वेग को नहीं जान पाये थे। पहली बार 1775 ई. में पृथ्वी से सूर्य की दूरी निर्धारित की गई। फिर 1776 में यूरोप के खगोलविद ओले रोमर ने प्रकाश का वेग निर्धारित किया। आगे के सौ साल में अनेक वैज्ञानिकों ने प्रकाश के वेग के बारे में नये आँकड़े प्राप्त किये।

आज हम जानते हैं कि प्रकाश-किरणों का वेग प्रति सेकेण्ड लगभग 3,00,000 किलोमीटर है। वर्तमान सदी के महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टाइन (1879-1955) ने हमें यह जानकारी भी दी है कि प्रकाश का वेग ही इस विश्व में महत्तम वेग है। अत: प्रकाश के वेग के पैमाने से हम आकाश के तारों की दूरियाँ माप सकते हैं। पृथ्वी से चाँद की औसत दूरी 3,84,400 किलोमीटर है। रेडियो-तरंगे 1.28 सेकेण्ड बाद चन्द्रमा की सतह पर पहुँच जाती हैं। अत: हम कह सकते हैं कि हमारा यह पड़ोसी पिण्ड हमसे 1.28 सेकेण्ड दूर है।

हम हिसाब लगा सकते हैं कि यदि प्रकाश की किरणें एक सेकेण्ड में 3,00,000 किलोमीटर दौड़ती हैं, तो एक वर्ष में वे कितनी दूरी तक

पहुँचेंगी। खगोल-विज्ञान में इस दूरी को 'प्रकाश-वर्ष' कहते हैं। एक प्रकाश-वर्ष लगभग 94,60,00,00,00,000 किलोमीटर के बराबर होता है।

सूर्य हमसे क़रीब 15 करोड़ किलोमीटर दूर है। प्रकाश की किरणें लगभग आठ मिनटों में इतनी दूरी तय करती हैं। सूर्य की सतह से निकली हुई प्रकाश की किरणें आठ मिनट बाद ही धरती पर पहुँचती हैं। इसलिए हम कहते हैं कि सूर्य हमसे क़रीब आठ मिनट दूर है। सौर-मण्डल का अन्तिम ग्रह प्लूटो सूर्य से लगभग साढ़े पाँच प्रकाश-घण्टे दूर है।

अब हम तारों की दूरियों पर विचार करेंगे। आकाश के सबसे नज़दीक के तारे को खगोलविद प्रोक्सिमा-सेंटौरी के नाम से जानते हैं। यह तारा हमसे 4.3 प्रकाश-वर्ष दूर है। इसका अर्थ यह हुआ कि सबसे नज़दीक के इस तारे का प्रकाश क़रीब चार साल के बाद ही हमारी पृथ्वी पर पहुँचता है।

आकाश का सबसे चमकीला व्याध या लुब्धक तारा हमसे क़रीब 9 प्रकाश-वर्ष दूर है। आकाश के दूसरे तारे हमसे सैकड़ों प्रकाश-वर्ष दूर हैं। हम बता चुके हैं कि ये सारे तारे आकाशगंगा के सदस्य हैं। आकाशगंगा में क़रीब 150 अरब तारे हैं।

पहिए के आकार की यह आकाशगंगा एक सिरे से दूसरे सिरे तक लगभग एक लाख प्रकाश-वर्ष चौड़ी है। केन्द्रभाग में इसकी मोटाई लगभग 20 हज़ार प्रकाश-वर्ष है। इतनी विशाल है हमारी यह आकाशगंगा। खगोल-विज्ञान की भाषा में तारों की ऐसी योजना को 'मंदाकिनी' कहते हैं। आकाशगंगा एक मंदाकिनी है।

हमारा सूर्य आकाशगंगा के केन्द्र में स्थित नहीं है। यह आकाशगंगा के केन्द्र से 30 हज़ार प्रकाश-वर्ष दूर है, इसकी बाहरी सीमाओं में। आकाशगंगा पहिए के आकार की है और हमारा सूर्य (इसके साथ हम भी) इसके किनारे पर हैं, इसीलिए आकाशगंगा-मंदाकिनी हमें एक पट्टे के रूप में दिखाई देती है।

हमारी आकाशगंगा पहिए के आकार की एक विशाल सर्पिल मंदाकिनी है। इसका व्यास 1,00,000 प्रकाश-वर्ष है ओर इसमें क़रीब 30 हज़ार प्रकाश-वर्ष दूर है।
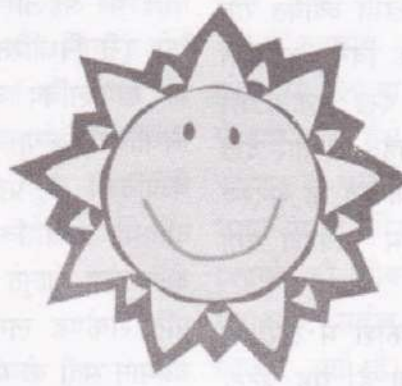
इस विश्व में कोई भी वस्तु स्थिर नहीं है। आकाशगंगा भी घूमती है और इसके तारे, सौर-मण्डल के ग्रहों की तरह, इसके केन्द्रभाग की परिक्रमा करते रहते हैं। हमारा सूर्य भी आकाशगंगा के केन्द्रभाग की परिक्रमा करता है। यह 220 किलोमीटर प्रति सेकेण्ड की गति से लगभग 25 करोड़ वर्षों में आकाशगंगा की एक परिक्रमा पूरी करता है। जाहिर है कि सूर्य के साथ पूरा सौर-मण्डल (जिसमें हमारी पृथ्वी भी है) आकाशगंगा की परिक्रमा करता रहता है। स्मरण रहे कि इस पृथ्वी पर अधिक-से-अधिक बीस लाख साल पहले मानव ने जन्म लिया। इसका अर्थ यह हुआ कि मानव के सम्पूर्ण इतिहास में सूर्य ने अभी आकाशगंगा का एक पूरा चक्कर भी नहीं लगाया है।

उपर्युक्त जानकारी से स्पष्ट होता है कि हमारा सूर्य आकाशगंगा का एक सामान्य तारा है। हम बता चुके हैं कि आकाशगंगा एक मंदाकिनी है।

लेकिन विश्व में सिर्फ़ यही एक मंदाकिनी नहीं है। बीसवीं सदी के खगोलविदों ने ब्रह्माण्ड में ऐसी और इससे कुछ भिन्न अरबों मंदाकिनियाँ खोजी हैं। उन अन्य मंदाकिनियों में भी अरबों तारे हैं।

हमारी आकाशगंगा-मंदाकिनी के बाहर सबसे नज़दीक की मंदाकिनी देवयानी नक्षत्र-मण्डल में दिखाई देती हैं, इसलिए उसे देवयानी-मंदाकिनी कहते हैं। यह देवयानी-मंदाकिनी हमारी आकाशगंगा से कुछ बड़ी हैं। उसमें भी अरबों-तारे हैं। देवयानी-मंदाकिनी हमसे 20 लाख प्रकाश-वर्ष दूर है। इसका अर्थ यह हुआ कि धरती पर देवयानी-मंदाकिनी के जिस प्रकाश को आज हम देख रहे हैं वह उस मंदाकिनी से 20 लाख वर्ष पहले निकला था। जिस समय यह प्रकाश देवयानी-मंदाकिनी से निकला, उस समय हमारी पृथ्वी पर मानव का कोई नाम-निशान भी नहीं था!

व्यास से 60 गुना अधिक है, परन्तु द्रव्यमान की दृष्टि से यह सिर्फ़ 4 गुना भारी है। कारण यह है कि हमारे सूर्य की द्रव्यराशि का औसत घनत्व 1.4 है (पानी का घनत्व 1 माना जाता है), लेकिन रोहिणी तारे की द्रव्यराशि का औसत घनत्व सिर्फ़ 0.00002 है!

दूसरी ओर, व्याध तारे के इर्द-गिर्द घूमने वाला तारा हमारे सूर्य से बहुत छोटा है, परन्तु भार में यह सूर्य के लगभग बराबर है। कारण यह है क इस तारे की द्रव्यराशि का औसत घनत्व 27 है। कुछ तारों की द्रव्यराशि का घनत्व इससे भी बहुत अधिक है। ऐसे अति सघन छोटे तारों को श्वेत वामन कहते हैं।

तापमान की दृ िट से भी हमारा सूर्य विशेष तारा नहीं है। सूर्य की सतह का तापमान लगभग 60000 सेण्टीग्रेड है। हमारा सूर्य पीले रंग का एक छोटा तारा है। नीले रंग के तारों का सतह तापमान 10 से 30 हज़ार डिग्री सेण्टीग्रेड तक होता है। कुछ तारों का सतह तापमान एक लाख डिग्री सेण्टीग्रेड तक होता है। सबसे ठण्डे तारे लाल रंग के होते हैं। इनका सतह तापमान 20000 सेण्टीग्रेड के आसपास होता है।

तारों के केन्द्रभाग में तापमान बहुत ऊँचा होता है, क्योंकि तारों की भट्ठी उनके केन्द्रभाग में ही होती है। इसी केन्द्रीय भट्ठी में तारे का द्रव्य, अति उच्च तापमान पर, ऊर्जा में बदलता रहता है। हमारे सूर्य के केन्द्र में तापमान लगभग दो करोड़ डिग्री सेण्टीग्रेड है। आकाशगंगा के कई तारों के केन्द्रभाग में हज़ारों गुना अधिक तापमान होता है। अतः तापमान की दृष्टि से भी हमारा सूर्य एक सामान्य तारा है।

कुछ तारों के इर्द-गिर्द दूसरे छोटे तारे चक्कर काटते हैं। हमने देखा है क व्याध तारे के इर्द-गिर्द एक अन्य छोटा तारा चक्कर लगाता है। ऐसे तारों को युग्म तारे कहते हैं। कभी-कभी तीन या अधिक तारे भी मिलकर एक-दूसरे की परिक्रमा करते रहते हैं। हमारी आकाशगंगा-मंदाकिनी में तारों के ऐसे अनेक जोड़े हैं। लेकिन हमारे सूर्य का कोई साथी-तारा नहीं है।

तारों की और भी अनेक विशेषताएँ हैं। उनके बारे में हम कभी अलग से बात करेंगे। यहाँ मुझे यही बताना था कि सूर्य आकाशगंगा का एक सामान्य तारा है। सौरमण्डल भी इसकी विशेषता नहीं है। दूसरे तारों के भी अपने परिवार हैं। उन तारों के ग्रहों पर भी जीवन का प्रादुर्भाव एवं विकास अवश्य हुआ होगा। यहाँ हमने सिर्फ़ यही जाना कि हमारा सूर्य एक सामान्य तारा है। लेकिन इसी तारे का हमारे लिए सबसे अधिक महत्व है।

कोंपल

श्यामबहादुर 'नम्र' की दो कविताएँ

होमवर्क

एक बच्ची स्कूल नहीं जाती, बकरी चराती है।
वह लकड़ियाँ बटोरकर घर लाती है,
फिर माँ के साथ भात पकाती है।
एक बच्ची किताब का बोझ लादे स्कूल जाती है,
शाम को थकी मांदी घर आती है।
वह स्कूल से मिला होमवर्क,
माँ-बाप से करवाती है।
बोझ किताब का हो या लकड़ी का
दोनों बच्चियाँ ढोती हैं,
लेकिन लकड़ी से चूल्हा जलेगा, तब पेट भरेगा,
लकड़ी लाने वाली बच्ची, यह जानती है।
वह लकड़ी की उपयोगिता पहचानती है।
किताब की बातें, कब, किस काम आती हैं?
स्कूल जाने वाली बच्ची बिना समझे रट जाती है।
लकड़ी बटोरना, बकरी चराना और
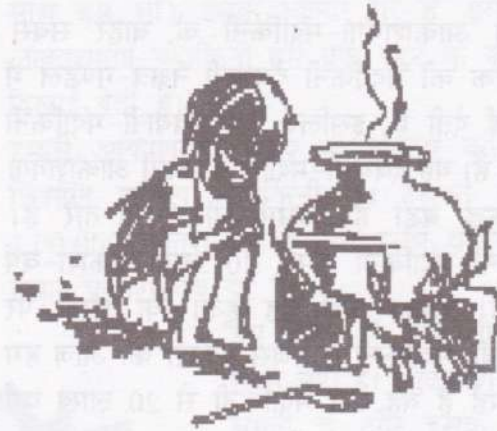
माँ के साथ भात पकाना,
जो सचमुच गृह कार्य हैं,
होमवर्क नहीं कहे जाते हैं।
लेकिन स्कूल से मिले पाठों के अभ्यास,
भले ही घरेलू काम न हों, होमवर्क कहलाते हैं।
ऐसा कब होगा,
जब किताबें सचमुच के 'होमवर्क'
(घर के काम) से जुड़ेंगी,
और लकड़ी बटोरने वाली बच्चियाँ भी
ऐसी किताबें पढ़ेंगी?
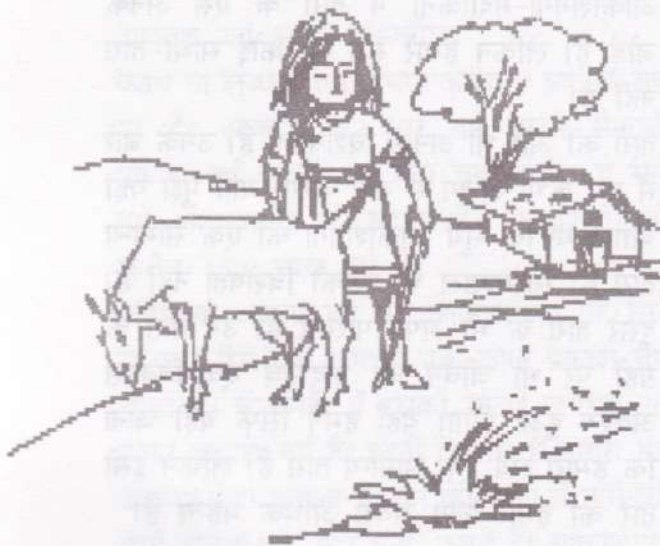
हमें नहीं चाहिए शिक्षा का ऐसा अधिकार

हमे नहीं चाहिए शिक्षा का ऐसा अधिकार,
जो गैर-जरूरी बातें जबरन सिखाये ।
हमारी जरूरतों के अनुसार सीखने पर
पाबन्दी लगाये,
हमें नहीं चाहिए ऐसा स्कूल
जहाँ जाकर जीवन के हुनर जाएँ भूल।
हमें नहीं चाहिए ऐसी किताब
जिसमें न मिले हमारे सवालों के जवाब
हम क्यों पढ़ें वह गणित,
जो न कर सके जिन्दगी का सही-सही हिसाब।
क्यों पढ़ें पर्यावरण के ऐसे पाठ
जो आँगन के सूखते वृक्ष का इलाज न बताये।
गाँव में फैले मलेरिया को न रोक पायें
क्यों पढ़ें ऐसा विज्ञान,
जो शान्त न कर सके हमारी जिज्ञासा ।
जीवन में जो समझ में न आये,
क्यों पढ़ें वह भाषा ।
हम क्यों पढ़ें वह इतिहास जो
धार्मिक उन्माद बढ़ाए
नफरत का बीज बोकर,
आपसी भाई-चारा घटाये।
हम क्यों पढ़ें ऐसी पढ़ाई जो कब कैसे काम
आएगी,
न जाए बताई ।
परीक्षा के बाद, न रहे याद,
हुनर से काट कर जवानी कर दे बरबाद ।

हमे चाहिए शिक्षा का अधिकार,
हमे चाहिए सीखने के अवसर
हमे चाहिए किताबें,
हमें चाहिए स्कूल।
लेकिन जो हमें चाहिए हमसे पूछ कर दीजिए।
उनसे पूछ कर नहीं जो हमें कच्चा माल
समझते हैं ।
स्कूल की मशीन में ठोक-पीटकर
व्यवस्था के पुर्जे में बदलते हैं,
हमें नहीं चाहिए शिक्षा का ऐसा अधिकार
जो गैर जरूरी बातें जबरन सिखाये
हमारी जरूरतों के अनुसार सीखने पर
पाबन्दी लगाये ।

(अफलातून के ब्लॉग 'शैशव' से साभार)

कविता के बारे में बच्चों से कुछ गपशप

शब्दों से जादू बुनना – कविता लिखना

दीपायन बोस

कविता लिखने के लिए ज़रूरी है – सादगी, मासूमियत, सच्चाई, ज़िन्दगी और कुदरत की सच्चाइयों को खोजने-जानने की लालसा और मनुष्यता के भविष्य को सुन्दर बनाने की तड़प। लेकिन सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं है। यदि तुम सपने नहीं देख सकते, यदि तुम्हारी कल्पनाओं के पास ऊँची उड़ान भरने की चाहत और माद्दा नहीं है, यदि उनके पैर दुनियादारी के कीचड़ में लिथड़े हुए हैं, यदि तुम सुदूर भविष्य की नीली गहराइयों में झाँकने की कोशिश नहीं करते, तो शायद तुम कविता नहीं लिख सकते।

कविता बच्चे भी लिख सकते हैं। वे ऊपर बतलाये गुणों से भरे-पूरे होते हैं। पर हम एक ऐसी लोभ-लाभ भरी दुनिया में रहते हैं, जहाँ ज़्यादातर लोग आगे वाले को टँगड़ी मारकर, रौंदकर आगे बढ़ने को आतुर होते हैं। जहाँ होश सम्हालते ही दुनियादारी की, सिर्फ़ अपना घर सँवारने की, सिर्फ़ अपने बारे में सोचने की नसीहत दी जाती है। ज़्यादातर लोग लकीर की फकीरी करके जीते हैं। कम होते हैं जो तौरे-ज़िन्दगी बदलने के बारे में सोचते हैं। ऐसे समाज में हृदय संकुचित हो जाते हैं। अजन्मी कविता की अकाल मृत्यु हो जाती है। सच्चा कवि मूलत: विद्रोही होता है। वह ऐसे समाज के चालू चलन के खिलाफ़ खड़ा होता है और अचिन्हित राहों पर चलता है।

कविता कल्पना की उड़ान के बिना नहीं होती। एक सामाजिक सरोकार वाले व्यक्ति की कल्पनाएँ सामाजिक सच्चाइयों से कटी-हुई नहीं होतीं...विमुख नहीं होतीं। कल्पना और स्वप्न के बिना नये जीवन की कोई परियोजना नहीं बनायी जा सकती। परियोजना बिना कोई निर्माण-कार्य नहीं हो सकता। बच्चों को अपने विचारों, भावनाओं,, अनुभूतियों को पंख देने चाहिए, उन्हें बेधड़क होना चाहिए, साहसिकता को नैसर्गिक गुण बनाना चाहिए। बच्चों को अपना बचपन बचाये रखना चाहिए। उन्हें सपने देखने की आदत कभी नहीं छोड़नी चाहिए।

जहाँ तक मुमकिन हो, कविता सहज-सरल होनी चाहिए। यदि यह जटिल भी लगती हो, या यदि इसका कथ्य कठिन भी हो तो कवि को चाहिए कि वह किसी रूपक या बिम्ब या सन्दर्भ के रूप में कोई एक काव्यात्मक कुंजी पाठक को थमा दे ताकि पाठक कविता की भीतरी दुनिया में प्रवेश कर सके और अपने विचारों-भावनाओं की साझेदारी कर सके, कवि से संवाद कर सके।

बड़ा कवि होना महत्वपूर्ण नहीं है। अच्छी
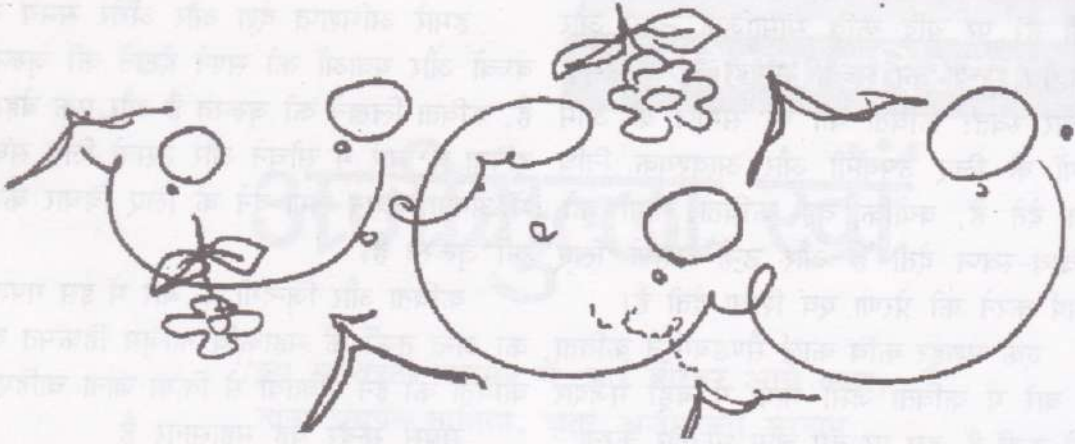
कविता होना महत्वपूर्ण है। बड़े कवियों ने बहुतेरी मामूली कविताएँ भी लिखी हैं। अल्पज्ञात कवियों ने कई शानदार कविताएँ लिखी हैं।

यदि कोई पाठक कविता के विचारों का साझीदार न बन सके, तो भी कम से कम इतना तो होना ही चाहिए कि वह अपने तईं कविता की विषयवस्तु के बारे में सोच सके। ऐसा नहीं कि वह यही सोचता रह जाये कि कविता की विषय-वस्तु है क्या!

कविता छन्द या लय में बँधे हुए शब्द मात्र नहीं हैं। वह महज़ बिम्बों-रूपकों की लड़ी नहीं है। छन्द-लय, रूपक-बिम्ब या अन्य अलंकार – ये सब कला हैं। कविता कला के साथ विचारों की, सन्देश की एकता है। यह बहुत स्वाभाविक तरीक़े से होना चाहिए। ज़्यादा सायासता के दबाव से तुम्हारी कविता चिटख-दरक जायेगी। टूट भी सकती है। कवि अपने आस-पास की चीज़ों के प्रति जागरूक और संवेदनशील तो होता ही है, उसके अन्दर एक अन्दरूनी स्फुलिंग (स्पार्क) या कौंध का होना भी बेहद ज़रूरी होता है और उसके अन्दर शब्दों से गहन लगाव भी होना चाहिए। अच्छी कविताओं में विचार, शब्दों और ढाँचे (स्थापत्य) में तालमेल होता है, उनकी एकता पूर्णता के निकट होती है। उनमें तराश ऐसी होती है कि लगता ही नहीं कि कहीं कुछ बदला जा सकता है। लेकिन कुछ कवि ढाँचे और शब्दों की तराश पर ज़्यादा ज़ोर देते हैं जबकि विचारों में अनगढ़ता, अन्तरविरोध या अधूरापन बचा रह जाता है। ऐसी कविता की चमक निर्जीव प्रतीत होती है।

मनुष्य की सभी सचेतन क्रियाओं में सोद्देश्यता होती है। कविता भी सोद्देश्य होती है। एक सच्ची और ईमानदार कविता अच्छे समाज और अच्छे मनुष्य के निर्माण में सहायक होती है, वह भविष्य की ओर जाती मनुष्यता के पदचिह्नों की शिनाख़्त करती है। कविता की सोद्देश्यता ऊपर से आरोपित नहीं होती। कवि यदि मानवीय उदात्त भावों वाला व्यक्ति है, यदि वह सामाजिक परिवेश के प्रति जागरूक है, यदि वह न्याय और मानवीय मूल्यों का आग्रही है, तो उसकी कविता में सोद्देश्यता आ ही जाती है, हालाँकि वह कविता मूड के सहज प्रवाह और आइडिया की कौंध के साथ एकदम स्वतःस्फूर्त क्रिया के समान ही लिखने बैठता है। काव्य सृजन यदि गहन आनन्दानुभूति न दे तो महज सामाजिक दायित्वबोध के नाते कोई कविता नहीं लिख सकता। इन अर्थों में कविता बेशक़ स्वान्तःसुखाय

होती है। पर यदि कवि सामाजिक न्याय और मानवीय मूल्यों का सच्चा आग्रही है, तो उसके विचार स्वतः कविता को पूरे समाज के आम लोगों के लिए उपयोगी और आवश्यक निधि बना देते हैं, क्योंकि वह कविता लोगों को भविष्य-स्वप्न देती है और उन्हें उसके लिए संघर्ष करने की प्रेरणा एवं शिक्षा देती है।

एक मशहूर कवि कार्ल सैण्डबर्ग ने कविता के बारे में कविता जैसी भाषा में बड़ी मज़ेदार बातें कहीं हैं, इस पर तुम लोग भी ग़ौर करना : "कविता धरती पर रहने वाले ऐसे समुद्री जीवों का रोजनामचा है जो हवा में उड़ना चाहते हैं। कविता अज्ञात और अज्ञेय की बाड़ेबन्दियों पर निशाना साधने के लिए अक्षरों की खोज है। यह एक मायावी लिपि है जो बताती है कि इन्द्रधनुष कैसे बनते हैं और क्यों वे चले जाते हैं।"

हमारे अभिशप्त देश और अँधेरे समय के बच्चों और युवाओं को सपने देखने की ज़रूरत है, कविता लिखने की ज़रूरत है और एक बेहतर दुनिया के बारे में सोचने और उसके लिए संघर्ष में अपना जीवन लगा देने के लिए विचार करने की ज़रूरत है।

कविता और ज़िन्दगी के बारे में इस गपशप का अन्त तुर्की के महाकवि नाज़िम हिकमत की कविता की इन पंक्तियों से किया जाना चाहिए :

सबसे सुन्दर वह महासागर है
जिसे अभी हममें से कोई नहीं देख पाया है
सबसे सुन्दर लगने वाला बच्चा वह है जो
अभी इस धरती पर जन्मा नहीं है।
सबसे सुन्दर लगने वाले दिन,
वे हैं जो ज़िन्दगी में अभी तक आये नहीं हैं।
सबसे सुन्दर बातें जो मुझे तुमसे करनी हैं
मेरे होंठ अभी तक तुमसे कह पाये नहीं हैं।

इतिहास/शख़्सियत
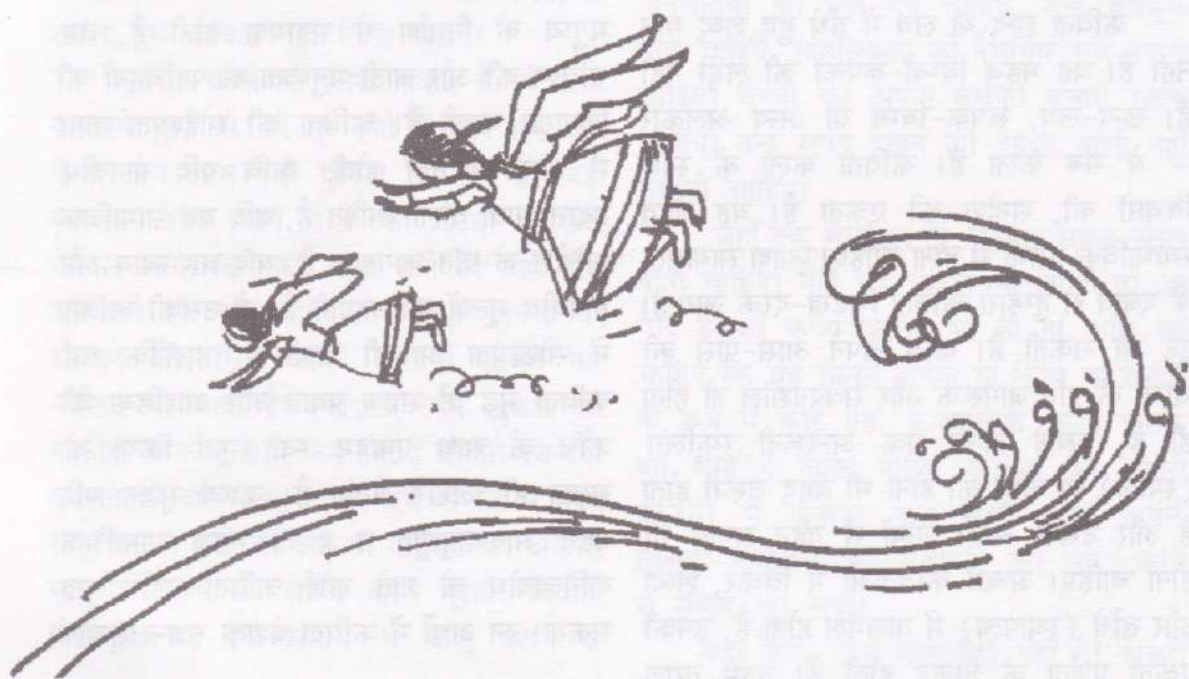
अजीमुल्ला खाँ

"इस स्वन्तत्रता महायज्ञ में, कई वीरवर आये काम,
नाना धुंधूपंत तातिया, चतुर अजीमुल्ला सरनाम,
अहमदशाह मौलवी, ठाकुर कुँवर सिंह सैनिक अभिराम,
भारत के इतिहास गगन में, अमर रहेंगे जिनके नाम।"

– सुभद्रा कुमारी चौहान
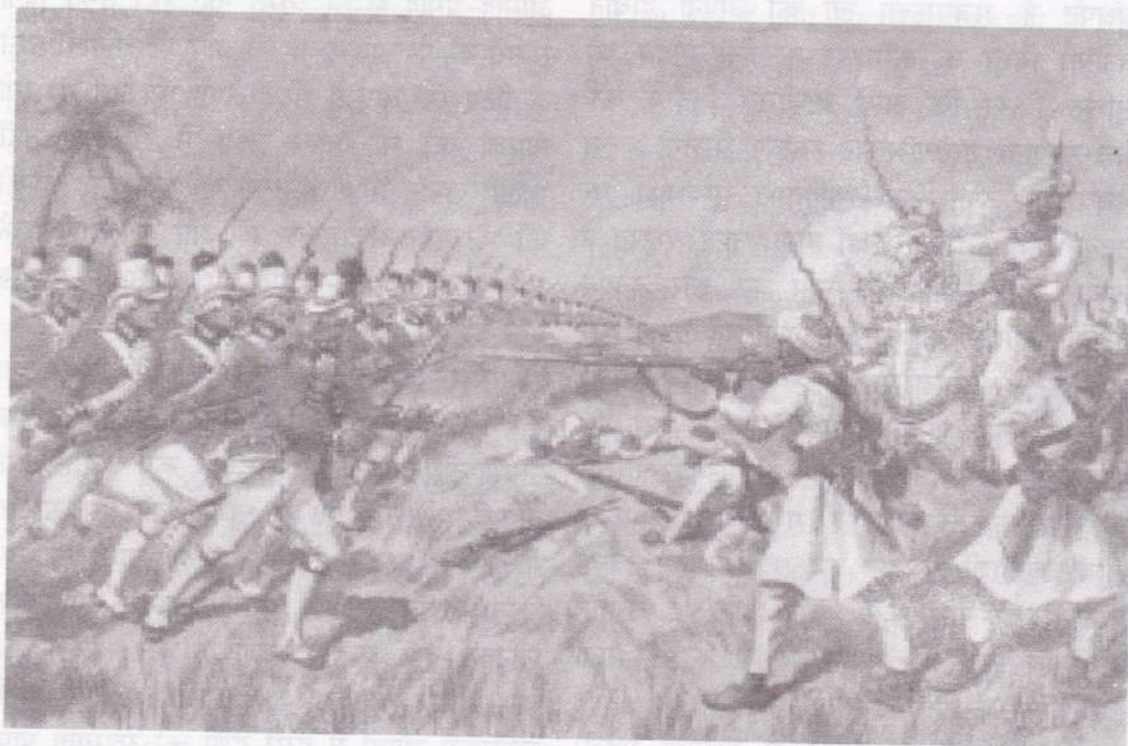
अजीमुल्ला खाँ का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ था परन्तु उनकी असाधारण प्रतिभा ने उन्हें विशिष्ट बना दिया। 1837-38 के दुर्भिक्ष में अजीमुल्ला खाँ और उनकी माँ भूख से मर रहे थे। कुछ समाजसेवी उन्हें अकालग्रस्त क्षेत्र से उठा लाये। उस समय अजीमुल्ला खाँ की आयु सबसे कम थी। वह दस वर्ष तक मि. पैटन के स्कूल में पढ़े। वहाँ

उनकी फ़ीस माफ थी और उन्हें 3 रुपये मासिक छात्रवृत्ति मिलती थी। बाद में वे इसी स्कूल में अध्यापक बन गये। अजीमुल्ला खाँ ने दो वर्ष तक ब्रिगेडियर स्काट के यहाँ मुंशी का कार्य किया और बाद में नाना धुंधूपंत के राजदरबार में आ गये।

प्रकृति ने अजीमुल्ला खाँ को सुन्दर नाक-नक्श और शरीर वरदान स्वरूप दिया था। अजीमुल्ला खाँ ने अपने प्रयत्न से अपने व्यक्तित्व को और भी अधिक आकर्षक बना लिया था।

विक्रमी संवत् 1908 अथवा 26 जनवरी 1851 को बिठूर के बाज़ीराव द्वितीय का स्वर्गवास हो गया। नाना धुंधूपंत उनके दत्तक पुत्र थे। धुंधूपंत ने अजीमुल्ला खाँ को अपना दीवान बनाया। बिठूर के कमिश्नर ने नाना साहब को सूचित किया कि उन्हें बाजीराव द्वितीय की धन-सम्पत्ति उत्तराधिकार स्वरूप मिलेगी परन्तु पेशवा की उपाधि एवं व्यक्तिगत सुविधाओं पर उनका कोई अधिकार नहीं होगा। नाना धुंधूपंत ने आदेश की कोई चिन्ता नहीं की और उन्होंने पेशवा महाराज की समस्त उपाधियाँ ग्रहण कर लीं। इस पर अंग्रेज प्रशासन ने अविलम्ब उनकी 8 लाख रुपये प्रतिवर्ष की पेंशन बन्द कर दी। इस परिस्थिति से नाना धुंधूपंत तथा उनके परिवार के लोग किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये। नाना धुंधूपंत ने लार्ड डलहौजी से कई बार पत्र-व्यवहार किया परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में उन्होंने अजीमुल्ला खाँ को अपना वक़ील बनाकर रानी विक्टोरिया के पास इंग्लैण्ड भेजा।

अजीमुल्ला खाँ 1853 में इंग्लैण्ड पहुँचे। लन्दन के समाज में उनका हार्दिक स्वागत हुआ। वहाँ के लोगों की दृष्टि में वह कोई राजकुमार अथवा नवाब लगते थे। अजीमुल्ला खाँ के पास हीरे थे, कश्मीरी शाल थे तथा एक आकर्षक व्यक्तित्व था। लन्दन की महिलाएँ उनके प्रति बहुत आकृष्ट हुईं। बहुत-सी अंग्रेज लड़कियाँ उनसे विवाह करने के लिए व्यग्र हो उठीं। उनको एक दृष्टि भर देख लेने के लिए महिलाओं की भीड़ लगी रहती थी। वे अजीमुल्ला खाँ को भावभीने पत्र लिखा करती थीं। बिठूर के पतन के उपरान्त अंग्रेजों को अजीमुल्ला खाँ के महल से ऐसे प्रेमपत्रों से भरा हुआ पूरा सन्दूक़ मिला। अजीमुल्ला खाँ के अंग्रेज महिलाओं से प्रेम-सम्बन्धों के कारण भारत में अंग्रेज-अधिकारी बेहद नाराज थे।

अजीमुल्ला खाँ नाना धुंधूपंत को पेंशन दिलाने में असफल रहे किन्तु वह इंग्लैण्ड में केवल आमोद-प्रमोद में ही व्यस्त नहीं रहे। उन्हीं दिनों सतारा के पदच्युत राजा की ओर से अपील करने के लिए रंगो बापूजी भी इंग्लैण्ड गये हुये थे। रंगो बापूजी को भी अपने लक्ष्य में सफलता नहीं मिली। लन्दन में अजीमुल्ला खाँ और रंगो बापूजी की भेंट हुई। अजीमुल्ला खाँ और रंगो बापूजी के धर्म व जाति विभिन्न होते हुए भी उनके सम्मुख एक ही लक्ष्य था। पं. सुन्दर लाल के अनुसार - ''इसमें सन्देह नहीं कि रंगो बापूजी और अजीमुल्ला खाँ ने लन्दन के कमरों में बैठकर बहुत दर्जे तक इस राष्ट्रीय योजना को रंग और रूप दिया।'' रंगो बापूजी दक्षिण भारत के नरेशों को इस राष्ट्रीय योजना के पक्ष में करने के लिए भारत आ गये किन्तु अजीमुल्ला खाँ यूरोप से सीधे अपने देश लौटकर नहीं आये। अंग्रेजों के बल और स्थिति को समझने के लिए तथा भारत के लिए भावी स्वतन्त्रता संग्राम में दूसरे देशों की सहायता प्राप्त करने के लिए विभिन्न देशों का भ्रमण करने लगे।

उन दिनों रूस और इंग्लैण्ड में युद्ध चल रहा था। अजीमुल्ला खाँ ने सुन रखा था कि रूस

ने अंग्रेज और फ्रेंच संयुक्त सेना के विरुद्ध मालटा में विजय प्राप्त की है। अजीमुल्ला खाँ ऐसे वीर सेनानियों को देखने के लिए उत्सुक थे जो अंग्रेजों पर विजय प्राप्त करने में समर्थ हुए थे। कुछ इतिहासकारों का यह भी मत है कि अजीमुल्ला खाँ नाना साहब की ओर से अंग्रेजों के विरुद्ध रूस से सन्धि करना चाहते थे। इसीलिए वह क्रीमिया युद्ध स्थल तक गये थे। क्रीमिया युद्ध के मोर्चे तक पहुँचने में अजीमुल्ला खाँ की डब्ल्यू. एच. रसल ने बड़ी सहायता की थी। रसल उन दिनों दैनिक टाइम्स के विशेष संवाददाता थे। अजीमुल्ला खाँ ने यह युद्ध डब्ल्यू.एच. रसल के साथ बहुत निकटता से देखा। एक दिन एक गोला ठीक अजीमुल्ला खाँ के पैर के निकट आकर गिरा परन्तु वह अविचलित बने रहे। रसल, अजीमुल्ला खाँ के क्रीमिया युद्ध में जाने को देखकर बहुत प्रभावित हुए। अजीमुल्ला खाँ ने इस युद्ध से यह जान लिया था कि अंग्रेज अजेय नहीं हैं। इसी भावना ने उन्हें 1857 की क्रान्ति के लिए प्रेरित किया।

क्रीमिया युद्ध क्षेत्र के उपरान्त अजीमुल्ला खाँ ने इटली, रूस, टर्की तथा मिस्र की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान उन्होंने इन देशों की सहानुभूति भारत के स्वतन्त्रता संग्राम की ओर प्राप्त करने का प्रयास किया। यह कहना कठिन है कि अजीमुल्ला खाँ को अपने ध्येय में कहाँ तक सफलता मिली। परन्तु यह बात निःसन्देह है कि क्रान्ति के दिनों में भारतवासियों में यह आम विश्वास था कि नाना साहब ने अंग्रेजों के विरुद्ध रूस से सन्धि की है तथा रूसी सेना भारत की सहायता के लिए तुरन्त आने वाली है। क्रान्ति के दिनों में इटली के प्रसिद्ध सेनापति गैरीबाल्डी अंग्रेजों के विरुद्ध भारतवासियों की सहायता के लिए अपनी सेना भेजने की तैयारी कर रहे थे। इटली की आन्तरिक कठिनाइयों के कारण वे शीघ्र ही भारत की ओर प्रस्थान नहीं कर सके और जब तक उन्होंने भारत आने की तैयारी की, क्रान्ति समाप्त हो चुकी थी।

अजीमुल्ला खाँ यूरोप और एशिया का भ्रमण करने के उपरान्त भारतवर्ष लौट आये। वह नाना धुंधूपंत के पास बिठूर पहुँचे और यहीं पर 1857 की क्रान्ति की योजना बनाने में अजीमुल्ला खाँ नाना धुंधूपंत के विशेष सलाहकार थे। 1856 में नाना साहब ने अपने बहुत से विशेष दूत, दिल्ली से लेकर मैसूर तक, क्रान्ति की ज्वाला प्रदीप्त करने के लिए भेजे। मैसूर की ओर जाते हुए ऐसे ही एक दूत को अंग्रेजों ने पकड़ लिया। अब उन्हें पता चला कि ऐसे ही दूत देश भर में आ-जा रहे हैं और आश्चर्यजनक ढंग से यह गुप्त षडयंत्र चलाया जा रहा था।

अजीमुल्ला खाँ और नाना साहब ने क्रान्ति के गुप्त संगठन को एक सूत्र में बाँधने के लिए देश भर में भ्रमण किया। सबसे पहले ये लोग दिल्ली पहुँचे तथा वहाँ पर बहादुर शाह ज़फर, मलिका जीनत महल तथा अन्य स्थानीय नेताओं के साथ गुप्त मंत्रणाएँ कीं। वहाँ से ये लोग अम्बाला पहुँचे। फिर कई स्थानों पर रुकते हुए ये लोग लखनऊ पहुँचे। वहाँ से अजीमुल्ला खाँ और नाना साहब कालपी होते हुए बिठूर लौट आये। अजीमुल्ला खाँ ने अपनी डायरी में लिखा है कि हम लोगों ने तीर्थयात्रियों के भेष में यात्रा की तथा वह इलाहाबाद, गया, जनकपुर, पारसनाथ, जगन्नाथपुरी, पंचवटी, रामेश्वर, द्वारका, नासिक, आबू, उज्जैन, मथुरा, बद्रीनाथ और कामरूप तक गये। अंग्रेज इतिहासकारों ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया है कि एक हिन्दू और एक मुसलमान तीर्थयात्रा पर साथ-साथ कैसे निकल पड़े। क्रान्ति की योजना को सफल बनाने के लिए अजीमुल्ला

खाँ और नाना साहब रास्ते की सब अंग्रेज छावनियों में भी गये।

कानपुर में क्रान्ति का आरम्भ 4 जून की रात्रि को दो बजे हुआ। क्रान्तिकारी सिपाहियों ने अंग्रेजों के बंगलों में आग लगा दी तथा खजाने और बारूदखाने पर अधिकार कर लिया। इसके उपरान्त क्रान्तिकारी सेना कानपुर से तीन-चार मील दूर कल्याणपुर में विचार-विमर्श के लिए एकत्रित हुई। अजीमुल्ला खाँ, नाना साहब तथा बाला साहब भी कानपुर से कल्याणपुर पहुँच गये। कहा जाता है कि कानपुर की क्रान्तिकारी सेना दिल्ली जाने के लिए उत्सुक थी और नाना साहब भी उनके साथ दिल्ली जाने को तैयार थे किन्तु अजीमुल्ला खाँ ने नाना साहब को परामर्श दिया कि दिल्ली जाने के स्थान पर कानपुर जाना अधिक उपयुक्त रहेगा क्योंकि कानपुर में वे स्वतंत्र रूप से क्रान्ति का संचालन कर सकते हैं परन्तु दिल्ली में उन्हें अन्य क्रान्तिकारी नेताओं के अन्तर्गत कार्य करना पड़गा। नाना साहब अजीमुल्ला खाँ का परामर्श मानकर वापस कानपुर लौट आये।

कानपुर का प्रशासन अपने हाथ में लेने के उपरान्त नाना साहब ने वहाँ पर क़ानून व व्यवस्था स्थापित करने का पूरा प्रयास किया।

कहा जाता है कि एक महिला अंग्रेजों के पास पत्र लेकर पहुँची। पत्र अजीमुल्ला खाँ का लिखा हुआ था परन्तु उस पर उनके हस्ताक्षर नहीं थे। पत्र में लिखा हुआ था - "जो लोग डलहौजी की नीति से सम्बन्धित नहीं हैं तथा आत्मसमर्पण करना चाहते हैं, उन्हें निर्विघ्न इलाहाबाद पहुँचा दिया जायेगा। अंग्रेजों के पास इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। ऐसी परिस्थिति में अजीमुल्ला खाँ और ज्वाला प्रसाद अंग्रेजों से वार्तालाप करने

और उनके शिविर में पहुँचे। दोनों ओर के प्रतिनिधियों की बैठक हुई। वार्तालाप के उपरान्त निम्नलिखित शर्तें निश्चित हुईं :

(1) अंग्रेज अपने शस्त्र नाना साहब को समर्पित कर देंगे। प्रत्येक व्यक्ति अपने साथ एक बन्दूक़ तथा 60 गोलियाँ ले जा सकेगा।

(2) स्त्रियों, बच्चों तथा घायलों के लिए वाहन का प्रबन्ध किया जायेगा।

(3) घाट पर नावों का प्रबन्ध होगा। नावों में खाद्य-सामग्री भी होगी।

अजीमुल्ला खाँ ने यह सब शर्तें स्वीकार कर लीं और शर्तों के अनुसार अंग्रेज नावों पर सवार हो गये। संयोगवश घाट पर उपस्थित जन-समूह में इलाहाबाद से आये हुये छठी पलटन के कुछ ऐसे सैनिक भी थे जिन्होंने जनरल नील के अमानुषिक अत्याचारों को अपनी आँखों से देखा था। जनरल नील ने यहाँ के अनेक गाँवों

को जला कर राख कर दिया था, सैकड़ों निर्दोष लोगों को गोलियों से भून डाला था। पेड़ों पर कितने ही लोगों को फाँसी लगाकर लटका दिया गया था और उेनकी लाशें टँगी रहने दी गयी थीं। अंग्रेजों को देखकर उनके हृदय में रोष तथा प्रतिहिंसा की ज्वाला भड़क उठी और उन्होंने इस अवसर का लाभ उठाकर अचानक गोलाबारी शुरू कर दी जिसके परिणामस्वरूप नावों पर सवार अनेक अंग्रेज वहीं मर गये। इतिहासकार सुरेन्द्रनाथ सेन ने लिखा है कि इस घटना के मूल में लोगों का जनरल नील की नृशंसता के प्रति आक्रोश था।

धीरे-धीरे क्रान्ति ने दूसरा मोड़ लिया। 17 जुलाई, 1857 को अंग्रेजों की सेना कानपुर पहुँच गयी। स्थान-स्थान पर अंग्रेजों और क्रान्तिकारियों की सेनाओं में युद्ध हुए। धीरे-धीरे क्रान्तिकारियों की शक्ति क्षीण होती चली गई। अंग्रेजों ने कई स्थानों पर पुन: अधिकार स्थापित कर लिया। अन्त में क्रान्तिकारी पराजित हुए। नाना साहब कानपुर छोड़कर कहीं और चले गये। अंग्रेजों ने विद्रोह करने वालों की एक सूची निकाली। इस सूची में अजीमुल्ला खाँ का नाम भी सम्मिलित था। क्रान्ति की असफलता के उपरान्त बहुत-से क्रान्तिकारी नेपाल की तराई की ओर चले गये। अजीमुल्ला खाँ भी उनमें से एक थे। वहाँ पर उन्हें भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। नेपाल के राणा जंगबहादुर ने क्रान्तिकारियों की कोई सहायता नहीं की बल्कि वह सदैव उनके विरुद्ध ही रहे। कठोर परिस्थितियों से संघर्ष करते-करते अक्टूबर के महीने में भुटवल नामक स्थान पर अजीमुल्ला खाँ की मृत्यु हो गयी।

अजीमुल्ला खाँ 1857 की जनक्रान्ति के 'मस्तिष्क' थे। 1857 की इस क्रान्ति से भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का शुभारम्भ हुआ। इस प्रकार अजीमुल्ला खाँ ने हमारे संग्राम की प्रारम्भिक ईंट रखी।

बच्चों के लिए अल्लामा इकबाल की कविता

एक मकड़ा और मक्खी

इक दिन किसी मक्खी से यह कहने लगा मकड़ा
इस राह से होता है गुजर रोज तुम्हारा
लेकिन मेरी कुटिया की न जगी कभी किस्मत
भूले से कभी तुमने यहां पाँव न रखा
गैरों से न मिली तो कोई बात नहीं है
अपनों से मगर चाहिए यूं खिंच के न रहना
आओ जो मेरे घर में, तो इज्जत है यह मेरी
वह सामने सीढ़ी है, जो मंजूर हो आना
मक्खी ने सुनी बात मकड़े की तो बोली
हजरत किसी नादां को दीजिएगा ये धोखा
इस जाल में मक्खी कभी आने की नहीं है
जो आपकी सीढ़ी पे चढ़ा, फिर नहीं उतरा
मकड़े ने कहा वाह! फरेबी मुझे समझे
तुम-सा कोई नादान जमाने में न होगा
मंजूर तुम्हारी मुझे खातिर थी वगरना
कुछ फायदा अपना तो मेरा इसमें नहीं था
उड़ती हुई आई हो खुदा जाने कहाँ से
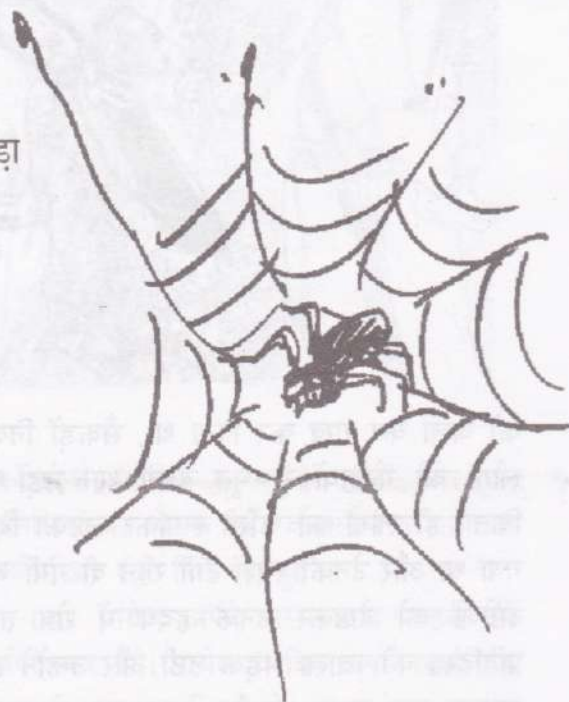
ठहरो जो मेरे घर में तो है इसमें बुरा क्या ?
इस घर में कई तुमको दिखाने की हैं चीजें,
बाहर से नजर आती है छोटी-सी यह कुटिया
लटके हुए दरवाजों पे बारीक हैं परदे
दीवारों को आईनों से है मैंने सजाया
मेहमानों के आराम को हाजिर हैं बिछौने
हर शख़्स को सामाँ यह मयस्सर नहीं होता
मक्खी ने कहा, ख़ैर यह सब ठीक है लेकिन
मैं आपके घर आऊँ , यह उम्मीद न रखना
इन नर्म बिछौनों से खुदा मुझको बचाये
सो जाए कोई इनपे तो फिर उठ नहीं सकता
मकड़े ने कहा दिल में, सुनी बात जो उसकी
फाँसूँ इसे किस तरह, यह कमबख्त है दाना
सौ काम खुशामद से निकलते हैं जहाँ में
देखो जिसे दुनिया में, खुशामद का है बन्दा
यह सोच के मक्खी से कहा उसने बड़ी बी !
अल्लाह ने बख्शा है बड़ा आपको रुतबा
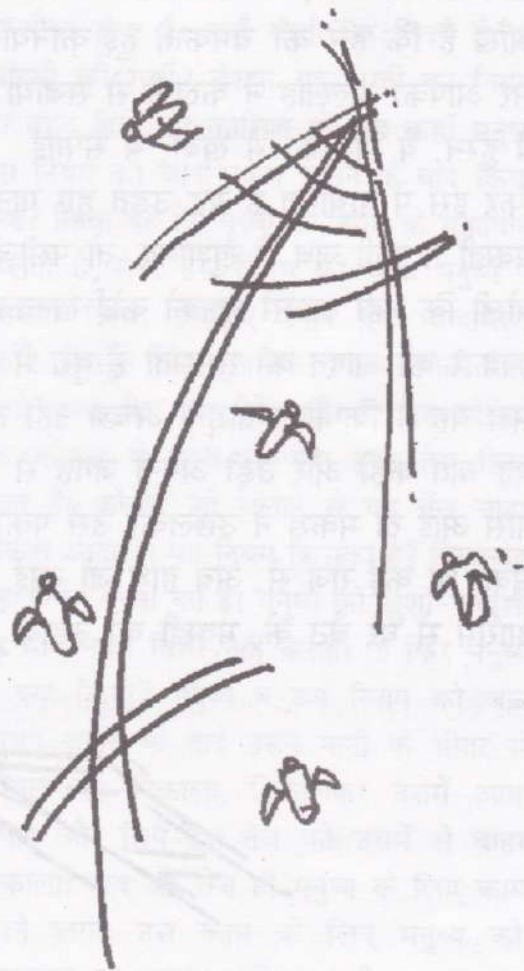
होती है उसे आपकी सूरत से मुहब्बत
हो जिसने कभी एक नजर आपको देखा
आँखें हैं कि हीरे की चमकती हुई कनियाँ
सर आपका अल्लाह ने कलगी से सजाया
ये हुस्न, ये पोशाक, ये खूबी, ये सफाई
फिर इस पे कयामत है यह उड़ते हुए गाना
मक्खी ने सुनी जब ये खुशामद, तो पसीजी
बोली कि नहीं आपसे मुझको कोई खटका
इनकार की आदत को समझती हूँ बुरा मैं
सच यह है कि दिल तोड़ना अच्छा नहीं होता
यह बात कही और उड़ी अपनी जगह से
पास आई तो मकड़े ने उछलकर उसे पकड़ा
भूका था कई रोज से, अब हाथ जो आई
आराम से घर बैठ के, मक्खी को उड़ाया
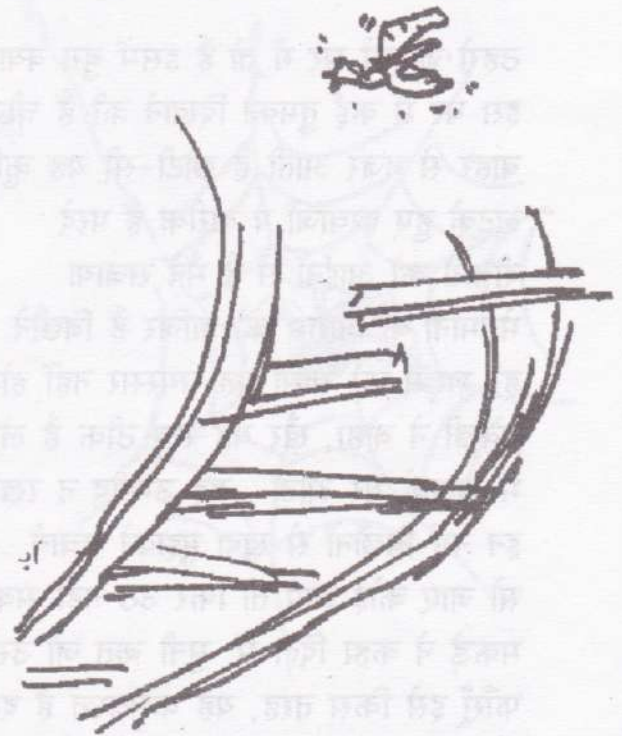
(वगरना = नहीं तो, सामाँ = सामान, दाना = समझदार, कनियाँ = टुकड़े)

जानने की बातें

पृथ्वी को जीतना क्या है?

• देवी प्रसाद चट्टोपाध्याय

मनुष्य पृथ्वी को जीत रहा है। किस अर्थ में जीत रहा है? कैसे जीत रहा है? क्या उसी अर्थ में, जिस अर्थ में कि विदेशी किसी देश को जीतते हैं? विदेशी जिस देश को जीतते हैं, उसके मत्थे अपने मनमर्जी के क़ायदे-क़ानून लाद देते हैं। लेकिन पृथ्वी के ही वे एक अंश हैं। धरती की बहुतेरी चीज़ों ने मिलकर मनुष्य को बनाया है। पृथ्वी के जो क़ायदे-क़ानून हैं, वे नितान्त ही पृथ्वी के हैं। यहाँ जो भी कुछ हो, सब उन नियमों के अनुसार होगा। लाख कोशिश करे, पर मनुष्य उन नियमों को ग़ायब नहीं कर सकते। हज़ार कोशिशों के बावजूद पृथ्वी के मत्थे मनुष्य अपने मन के नियम नहीं मढ़ सकते। इसलिए मनुष्यों का पृथ्वी को जीतना किसी विदेशी की देश-विजय जैसा हो ही नहीं सकता। लेकिन यह बात भी सत्य है कि मनुष्य पृथ्वी को जीतता है। किस अर्थ में जीतता है? असल में मनुष्य करता क्या है कि पृथ्वी के ही क़ायदे-क़ानूनों को और अच्छी तरह ढूँढ निकालता है। चीन्हता-जानता है। चूँकि उन नियमों को चीन्हता-जानता है, इसलिए उनके ज़रिए अपना मतलब निकाल सकता है; दुनिया में जो कुछ घटित होता है, वह मनुष्य के मन-मुताबिक नहीं, बल्कि दुनिया के नियम मुताबिक ही होता है। लेकिन उन नियमों को जानने के कारण मनुष्य ऐसी व्यवस्था कर लेते हैं कि उसके फल से उनका सुख और वैभव ही बढ़ता है। इसी को कहा गया है, मनुष्य का पृथ्वी को जीतना। दो-चार उदाहरणों से ही बात और साफ़ हो जायेगभ ज़मीन से बीज बोने से पौधा होता है। यहाँ धरती का नियम है या आदमी की मर्जी? बेशक यह धरती का नियम है। बहुत दिनों की कोशिश के बाद कहीं मनुष्य इस नियम को जान सका। जानने के बाद किया क्या? किया यह कि पृथ्वी के नियम के मुताबिक फलती है, मगर उस नियम को चूँकि मनुष्य ने पहचान लिया, इसलिए उसने ऐसा बन्दोबस्त किया, जिससे माँग-मुताबिक फसल उसके लिए मानो पृथ्वी पैदा कर देने लगी। या यह सोचिये कि कोयले में सूरज से पाया हुआ तेज छिपा हुआ है। कोयले को जलाने से वह तेज बाहर निकल आता है। यह नियम किसका है? निस्सन्देह यह नियम पृथ्वी का है। मनुष्य को खुशी-नाखुशी पर यह नियम निर्भर नहीं करता। तो फिर मनुष्य ने क्या किया? मनुष्य ने उस नियम को जान लिया। जानने के बाद उसने माटी के भीतर से कोयले को निकाला, निकालकर उसमें आग लगाई और छिपे हुए तेज को उसमें से बाहर निकाला। अब वह तेज ही मनुष्य के लिए काम करने लगा। उस काम के लिए मनुष्य को मशक्कत की ज़रूरत नहीं रह गयी। मतलब यह कि पृथ्वी के नियम से ही एक घटना हुई, लेकिन उसका लाभ मिला मनुष्य को। पृथ्वी को जीतना यही कहलाया। जीतने में असली बात पृथ्वी के क़ायदे-क़ानून को साफ़-साफ़ जानना

है।

इतना जान लेने के बाद फिर हम उसी बात पर लौटें, जिसकी चर्चा हो रही थी। बात हो रही थी धर्मविश्वास की, कि वह महज मनुष्य से मनुष्य के संग्राम की ही राह का रोड़ा नहीं बना, बल्कि पृथ्वी से मनुष्य के संग्राम की राह की भी अड़चन बनकर खड़ा हो गया। क्योंकि पृथ्वी से लड़ाई ठीक-ठीक चलाने के लिए पृथ्वी के ही क़ायदे-क़ानूनों की जानकारी होनी चाहिए। लेकिन धर्मविश्वास लोगों को यह बताने लगा कि यहाँ तो कुछ भी नहीं होता। यह हो गई है असल में अलौकिक घटना। किन्तु पृथ्वी के नियमों की जानकारी पर ही निर्भर करती है प्रकृति से लड़ाई में आदमी की हार या जीत। ऐसे में धर्मविश्वास राह का रोड़ा बन जाता है या नहीं? इधर बलवानों के लिए ग़रीबों को दबाये रखने के काम में भी धर्म विश्वास बड़े काम का निकला। बलवानों ने नियम बना दिया – धर्मविश्वास के खिलाफ़ कोई चूँ भी नहीं कर सकता। लिहाजा पृथ्वी के क़ायदे-क़ानूनों को चीन्हना ही पाप माना गया। पापियों के लिए सज़ा बनायी गयी। कैसी सजा, याद है? पृथ्वी सूरज के चारों ओर घूमती है, इस संसारी नियम को सच साबित करने में बेचारे बूढ़े गैलीलियो को अपमानित होना पड़ा था, सज़ा भोगनी पड़ी थी। लेकिन उसने जो बताया था, वह सच ही था, झूठ नहीं। तो सच कहने के लिए भी मनुष्य को सज़ा दी गयी है! ऐसी सज़ा क्यों तय की गयी? धर्मविश्वास से। सत्य की खोज के लिए मनुष्य की जो चिन्ता थी, उसकी राह बहुत दिनों तक इसी धर्मविश्वास ने रोक रखी थी।

इतिहास में ऐसी घटना एक बार नहीं, बार-बार घटती रही है।

प्रकृति के साथ मनुष्य के जूझने में धर्मविश्वास की अड़चन बेहद बड़ी अड़चन रही।

(जानने की बातें)

सौदागर और कप्तान

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला
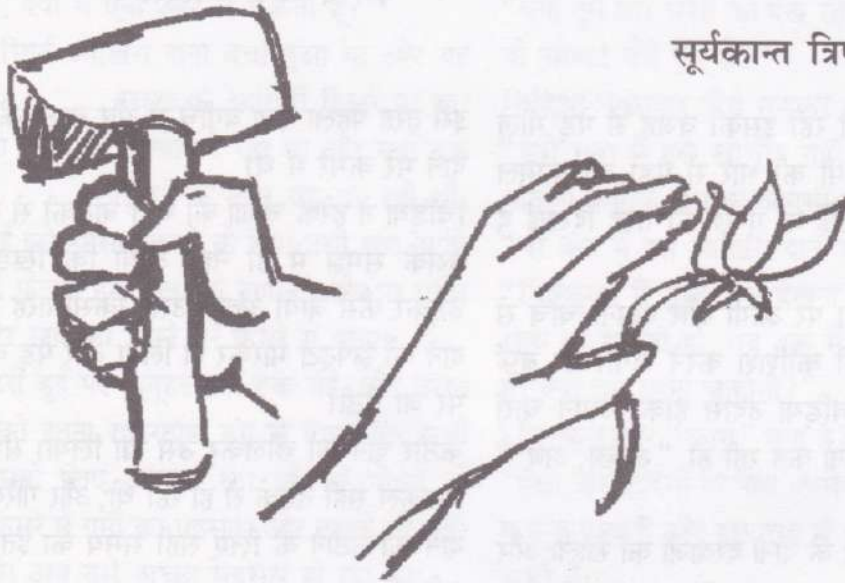
एक सौदागर समुद्री यात्रा कर रहा था, एक रोज उसने जहाज़ के कप्तान से पूछा, ''कैसी मौत से तुम्हारे बाप मरे?''

कप्तान ने कहा, ''जनाब, मेरे पिता, मेरे दादा और मेरे परदादा समन्दर में डूब मरे।''

सौदागर ने कहा, ''तो बार-बार समुद्र की यात्रा करते हुए तुम्हें समन्दर में डूबकर मरने का ख़ौफ़ नहीं होता?''

''बिल्कुल नहीं,'' कप्तान ने कहा, ''जनाब, कृपा करके बताइये कि आपके पिता, दादा और परदादा किस मौत के घाट उतरे?''

सौदागर ने कहा, ''जैसे दूसरे लोग मरते हैं, वे पलंग पर सुख की मौत मरे।''

कप्तान ने जवाब दिया, ''तो आपको पलंग पर लेटने का जितना ख़ौफ़ होना चाहिए, उससे ज़्यादा मुझे समुद्र में जाने का नहीं।''

विपत्ति का अभ्यास पड़ जाने पर वह हमारे लिए रोज़मर्रा की बात बन जाती है।

रूसी कहानी

तीस दाने

+ येवेनी नोसोव

रात भर बर्फ गिरती रही इसकी वजह से पेड़ गीले हो गये थे। और नमी की भार से पेड़ों की कोमल शाखाएँ सफेद मिठाई के गुच्छे की तरह दिखाई दे रही थीं।

एक चिड़िया शाखा पर आयी और अपनी चोंच से बर्फ को तोड़ने की कोशिश करने लगी। पर बर्फ बहुत सख्त था। चिड़िया उदास होकर अपने चारों ओर देखने लगी मानो कह रही हो, "अच्छा, अब मैं क्या करूँ?"

मैंने अपनी खिड़की के दोनों दरवाजों को खोला और चौखटे के बाहर एक रूलर रख दिया। रूलर के हरेक सेंटीमीटर के निशान पर ड्राइंगपिन से एक-एक दाने को लगा दिया।

इस तरह पहला दाना बगीचे में और बाकी के उन्तीस दाने मेरे कमरे में थे।

चिड़िया ने हरेक चीजों को बड़ी बारीकी से देखा पर उसके समझ में ही नहीं आया कि खिड़की पर उड़कर कैसे जायें। अंतत: उसने किसी तरह से पहले दाने को झपट्टा मारकर ले लिया और पेड़ की डाल पर जा बैठी।

कठोर दाने को छीलकर उसे खा लिया। सभी चीजें बिल्कुल सही तरीके से हो रही थी, और गोरैया इसके दाने को उठाने के लिए सही समय का इंतजार कर रही थी।

मैंने अपनी मेज पर बैठकर काम कर रहा था ओर बीच-बीच में चिड़िया को देख ले रहा था।

चिड़िया भयभीत होकर कमरे की छानबीन और ताका-झाँकी कर रही थी। फिर उसने रूलर की ओर एक-एक सेंटीमीटर चलना शुरू किया।

"क्या मैं दूसरा दाना ले सकती हूँ?"

उसने अपनी पंखों को हिलाया और उड़कर अनाज के दूसरे दाने को भी उठाकर पेड़ पर ले गयी। ऐसा चलता रहा।

"प्लीज, क्या मैं एक और ले सकती हूँ?"

अब सिर्फ आखिरी दाना बचा हुआ था ओर यह रूलर के आखिरी हिस्से पर था।

दाना इतनी दूर दिखाई दे रहा था और यहाँ तक पहुँचने के लिए वह डर रही थी। डरती हुई इसे हासिल करने के लिए उसी क्षण अपने पंखों को फैलाते हुए रूलर के आखिरी छोर पर पहुँच गयी और खुद को उसने मेरे कमरे में पाया।

थोड़ी डरी हुई पर कुतूहलवश रुक गई, और उसने दुनिया को इतना रहस्यपूर्ण ढंग से देखा और सभी कुछ उसके लिए अद्‌भुत था। हरे-भरे पौधों के गमले, कमरे में गर्मी का एहसास और उसके पैर वहीं रुक गये। अब उसे अच्छा महसूस हो रहा था।

"क्या तुम यहाँ रहते हो?"

"हाँ, मैं यहीं रहता हूँ।"

"पर यहाँ पर बर्फ क्यों नहीं है?"

जवाब देने के लिए मैं स्विच के लिए बढ़ा। सफेद काँच के गोले की रोशनी छत पर पड़ रही थी।

"सूरज।" चिड़िया विस्मित होकर हाँफते हुए बोली,"

"और वह क्या है?"

"वे सब किताबें हैं।"

"किताबें क्या होती हैं?"

"वे हमें बताती हैं कि सूरज की रोशनी क्या होती हैं, पौधे और पेड़ कैसे बढ़ते हैं और तुम कैसे एक टाँग पर खड़ी रहती हो, और भी बहुत सारी चीजों के बारे में सिखाती हैं।"

"यह तो बहुत ही अच्छा है और तुम इन सबसे डरते नहीं हो?

"तुम क्या हो?"

"मैं एक मनुष्य हूँ।"

"मनुष्य क्या होता है?"

इसको बताना थोड़ा मुश्किल था। फिर भी मैंने कहा :

"क्या तुम उस रस्सी को देख रहे हो जिससे खिड़की के चौखटे बँधे हुए हैं?"

चिड़िया घबराकर पीछे मुड़कर देखने लगी।

"डरो मत। मैं इसे खीचूँगा नहीं और बन्द भी नहीं करूँगा क्योंकि मैं एक आदमी हूँ।"

"पर क्या मैं इस आखिरी दाने को खा सकती हूँ?"

"बिल्कुल। मैं तुम्हें रोज देखना चाहता हूँ। तुम मेरे साथ रह सकती हो, तब तक मैं अपना काम करता हूँ। क्या तुम रहना चाहोगी?"

"बिल्कुल। पर "काम" क्या है?"

"देखो, हर आदमी के पास काम करने के लिए कुछ न कुछ होता है और इस तरह वे एक-दूसरे की मदद करते हैं।

"और तुम दूसरे लोगों की किस तरह से मदद करते हो?"

"मैं एक किताब लिखने जा रहा हूँ और जो भी इसे पढ़ेगा वह अनाज के तीस दानों को अपनी खिड़की पर रख देगा..."

पर चिड़िया इसे सुनने के लिए वहाँ नहीं थी। उसने बड़े ही आत्मविश्वास के साथ अपने छोटे से पंजे में रूलर के आखिरी हिस्से पर पड़े हुए आखिरी बीज के दाने को पकड़ा हुआ था।

अनुवाद : शाकम्भरी

रूसी परिकथाएँ

शुतुरमुर्ग और कछुआ

+ सेर्गेई बारुज़दिन

कहते हैं, इस्तेमाल न करने से किसी भी चीज़ में जंग लग जाती है, चाहे वह दिमाग़ ही क्यों न हो। एक बार शुतुरमुर्ग के साथ भी ऐसा ही हुआ। यह मज़ेदार वाकया एक रेगिस्तान में हुआ।

कछुआ रास्ते में शुतुरमुर्ग से मिला और कहा, ''चलो, यह देखने के लिए तुम्हारे और मेरे बीच एक मुक़ाबला हो जाये कि हममें से कौन तेज दौड़ लगा सकता है।''

''पूरी दुनिया जानती है कि मैं सबसे तेज दौड़ने वाला प्राणी हूँ,'' शुतुरमुर्ग व्यंग्यपूर्वक बोला।

''हाँ-हाँ, ठीक है, फिर भी इसे साबित तो करना ही पड़ेगा न'' कछुए ने विनम्रता से कहा।

''कौन-सी बड़ी बात है यह, जब चाहो रख लो मुक़ाबला'' शुतुरमुर्ग अकड़ते हुए बोला।

उन्होंने अगली सुबह मुक़ाबला रखने का तय किया।

इस बीच, कछुआ धीमे-धीमे चलते हुए रेगिस्तान के दूसरी तरफ़ अपनी माँ
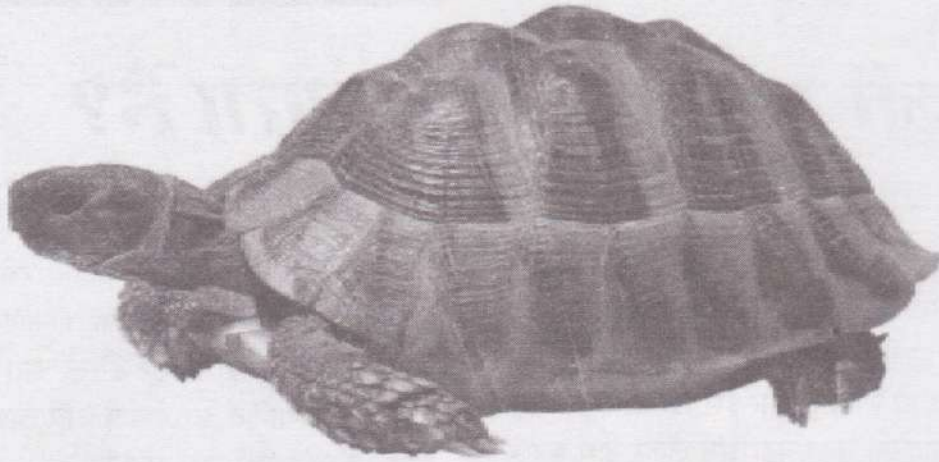
के पास गया। वहाँ पहुँचने में उसे आधी रात का समय लग गया।
''माँ, कल सुबह यहीं बैठे रहना, ठीक इसी जगह। यहाँ से दूर कहीं मत जाना,'' कछुए ने आग्रह किया।
''मगर क्यों?'' कछुए की माँ ने पूछा।
''कोई बात है तभी तो!'' कछुआ बोला।
और फिर, कछुआ वापस धीमे-धीमे चलते हुए सुबह तक उसी जगह पर वापस आ गया, जहाँ पर दौड़ शुरू होती थी। कुछ ही देर बाद शुतुरमुर्ग भी वहाँ पहुँच गया।
''क्या हम दौड़ लगाना शुरू करें?'' कछुए ने पूछा।
''एक...दो...तीन...'', शुतुरमुर्ग ने दौड़ लगाने के लिए गिनती शुरू कर दी।
और दौड़ शुरू हो गयी।
शुतुरमुर्ग रेगिस्तान की दूसरी तरफ़ तेजी से दौड़ता गया, मगर कछुए को पहले से ही वहाँ पहुँचा हुआ पाया। उसने वापस पीछे की ओर और तेजी से दौड़ लगायी मगर कछुआ वहाँ भी शुतुरमुर्ग से पहले ही मौजूद मिला। शुतुरमुर्ग को कोटो तो मानो खून नहीं। कछुए की आश्चर्यजनक तेजी पर शुतुरमुर्ग तो हतप्रभ-सा खड़ा रह गया। वह कभी रेगिस्तान के इस तरफ़ देखता, तो कभी उस तरफ़। उसको दिन में ही तारे नज़र आने लगे और उसका दिमाग़ फ़्यूज बल्ब जैसा हो गया।
''ऐसा कैसे हो सकता है।'' शुतुरमुर्ग ने चकित होकर पूछा।
''अपने पैरो के साथ, कभी-कभी अपने दिमाग़ को भी थोड़ा दौड़ा लेना चाहिए'' कछुआ बोला।
''नहीं, मुझे तो देखकर कुछ समझ ही नहीं आया'' शुतुरमुर्ग ने कहा।
''क्योंकि, चीज़ों को तुम सिर्फ़ आँखों से ही देखते हो, दिमाग़ से नहीं'' कछुआ बोला।
''आखिर तुम कहना क्या चाहते हो?'' शुतुरमुर्ग ने गोल-गोल सिर हिलाते हुए पूछा।
''एकदम आसान है'' कछुए ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया।
''रेगिस्तान की दूसरी तरफ़ जिसे तुमने बैठे देखा था, वह मेरी माँ थी। और इस पर तुमने एक बार भी ध्यान नहीं दिया कि वह मेरी दुगुनी उम्र की है।''

अनुवाद : राकेश

पानी आग क्यों बुझाता है?

इस सरल प्रश्न का उत्तर सभी नहीं जानते, इसीलिए यदि मैं संक्षेप में बता दूँ, तो आशा है कि पाठक बुरा नहीं मानेंगे।

सम्भवतः पानी जलती वस्तु के संसर्ग में आकर वाष्प में परिणत हो जाता है और इस क्रिया में वह जलती वस्तु से ताप का बहुत बड़ा अंश लेकर ख़र्च कर देता है; खौलते पानी को पूरी तरह वाष्प में परिणत करने के लिए पाँच गुना अधिक ताप की आवश्यकता पड़ती है, बनिस्पत कि ठण्डे पानी को सौ डिग्री तक गर्म करने में।

और दूसरे इस विधि से उत्पन्न वाष्प उसे जन्म देने वाले पानी से सैकड़ों गुना अधिक आयतन रखता है; वह जलती वस्तु को घेरकर उसके चारों तरफ़ की हवा को विस्थापित कर देता है और बिना हवा के कोई भी वस्तु नहीं जल सकती।

पानी की अग्निशामक शक्ति बढ़ाने के लिए कभी-कभी उसमें बारूद मिला दिया करते हैं।
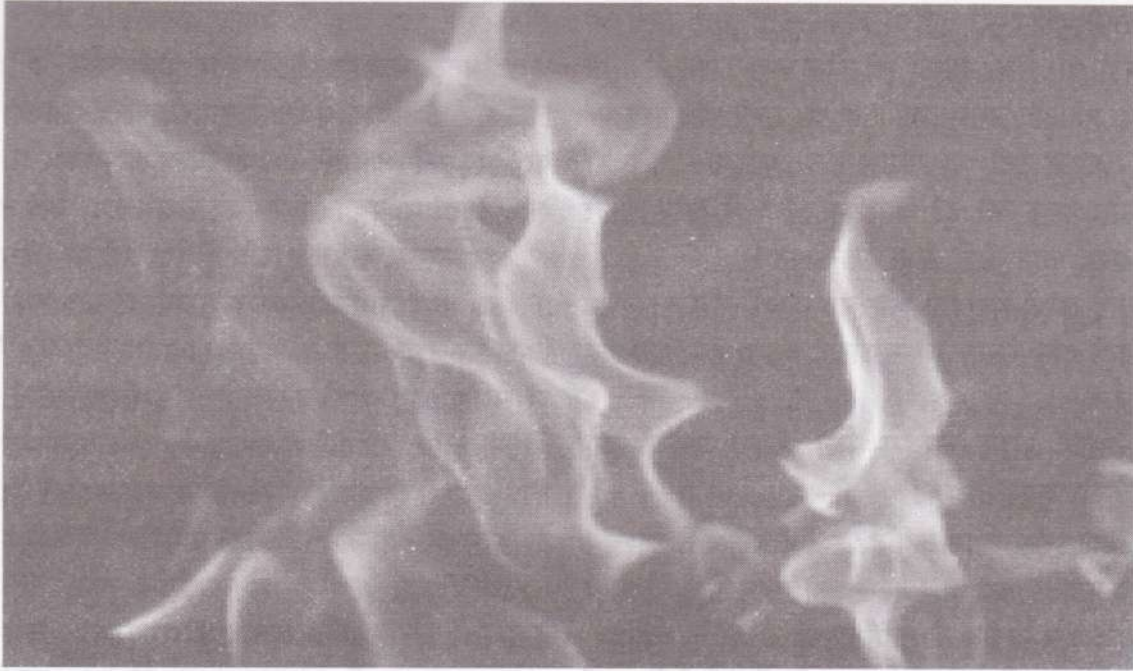
पढ़कर आपको आश्चर्य होता होगा, पर बात काफ़ी बुद्धिमानी की है : बारूद बहुत जल्द जल जाती है और ढेर सारी अदहनशील गैसें बना देती हैं। ये गैसें जलती वस्तु को आवृत्त करके जलने की क्रिया में बाधा डालने लगती हैं।

आग से अग्नि शमन

आपने सुना होगा कि जंगल या ऊँची घास व झाड़ियों वाले विस्तृत मैदान में लगी आग को रोकने के लिए कभी-कभी दूसरी तरफ़ से आग लगा दी जाती है। नयी लपटें मार्ग में मिलने वाले दहनशील पदार्थों को जलाकर उसे उसके आहार से वंचित कर देती हैं। जैसे ही आग की दोनों दीवारें मिलती हैं, दोनों तरफ़ की आग बुझ जाती है, मानो वे एक-दूसरे को निगल गयी हों।

अमेरिका के एक मैदान में लगी आग को इस विधि से बुझाने की विधि का वर्णन बहुतों ने कूपर के उपन्यास ''प्रेयरी'' में पढ़ा होगा। बूढ़े ट्रैपर (बहेलिये) द्वारा पथिकों की मैदानी आग से रक्षा का नाटकीय दृश्य भुलाया नहीं जा सकता। ''प्रेयरी'' का यह अंश उद्धृत किया जा रहा है :

''बूढ़ा अचानक उठकर खड़ा हो गया।

– अब कुछ करना चाहिए; समय आ गया है, – उसने कहा।

– अब! अब बहुत देर हो चुकी है, बूढ़े। मिडिलटोन ने चीखकर कहा। – आग हमसे कोई चौथाई मील की दूरी पर है और हवा उसे भयानक गति से हमारी ओर बढ़ा रही है!

–आग-वाग से मैं नहीं डरता। आओ बहादुरो, जरा इस सूखी घास को हाथ लगाते हैं। यहाँ ज़मीन को थोड़ी नंगी करनी है।

जल्दी ही क़रीब 20 फीट व्यास वाली गोलाकार जगह साफ़ हो गयी। ट्रैपर ने औरतों को आग से दूर वाले छोर पर खड़ा रहने और उन्हें अपने कपड़ों को कम्बल से लपेट लेने की हिदायत दे दी; कपड़ों के जल उठने का खतरा अधिक था। यह सावधानी बरत लेने के बाद बूढ़ा उस ओर बढ़ा, जिधर से आग की

लपलपाती लपटें उन्हें छल्ले की तरह घेरती चली आ रही थीं। उसने मुट्ठी भर घास बन्दूक़ की नली पर उठायी और उसमें आग लगा दी। सूखी घास क्षण भर में लहक उठी। बूढ़े ने उसे ऊँची झाड़ियों में फेंक दी और साफ़ की हुई जगह के बीच में खड़ा होकर अपने काम का नतीज़ा देखने लगा।

नयी लपटें भुक्खड़ों की तरह अपने शिकार पर टूट पड़ी और मैदान को सफाचट करती हुई आगे बढ़ चलीं।

-अब आप देखेंगे कि आग आग को कैसे बुझाती है।

-क्या इससे ख़तरा नहीं है? - मिडिलटोन ने आश्चर्य से पूछा। - क्या आप दुश्मन को दूर भगाने की बजाय उसे और क़रीब तो नहीं ला रहे हैं?

अब आग तीन तरफ़ से बढ़ रही थी; चौथी दिशा में उसका अन्त हो रहा था, वह भूख से दम तोड़ रही थी। वहाँ खाना नहीं था। आग के पीछे धुँआ छोड़ती काली ज़मीन छूटती जा रही थी। घास गढ़ने पर भी वह इतनी साफ़ नहीं होती।

भगेड़ुओं की स्थिति और भी ख़तरे में होती, यदि उनके द्वारा साफ़ की गयी ज़मीन का क्षेत्रफल बढ़ता नहीं जाता, - आग दूसरी दिशा से भी तो बढ़ रही थी!

कुछ मिनटों बाद लपटें हर ओर पीछे हटने लगीं। लोग धुएँ के बादलों में लिपटे हुए थे, पर पागलों की तरह बढ़ रही आग की बाढ़ से बिल्कुल स्वतन्त्र थे। लोग ट्रैपर द्वारा प्रयुक्त विधि की सरलता पर चकित थे और उसके कारनामे को यूँ देख रहे थे, जैसे फेर्दिनांद के दरबारी कोलम्बो को, जब वह अण्डे को टेबुल पर उसके सिरे के सहारे खड़ा कर रहा था।"

पर मैदानी आग बुझाने की विधि इतनी सरल नहीं है, जितना ऊपर से देखने में लगता है। आग बुझाने के लिए आग भेजने का काम किसी अनुभवी व्यक्ति को ही करना चाहिए, अन्यथा प्रकोप कम होने की बजाय बढ़ भी सकता है।

इसके लिए कितनी निपुणता की आवश्यकता है, यह आप निम्न प्रश्नों का उत्तर देने के बाद ही समझ सकेंगे : ट्रैपर द्वारा लगायी गयी आग असली आग की दिशा में ही क्यों भागने लगी; वह उल्टी दिशा में क्यों नहीं बढ़ने लगी? आखिर हवा आग की ओर से आ रही थी और आग को पथिकों की दिशा में खदेड़ रही थी! इसलिए ट्रैपर द्वारा लगायी गयी आग को असली आग, की ओर नहीं, उल्टा लोगों की ओर बढ़ना चाहिए था। पर यदि ऐसा होता, तो राहियों की मृत्यु निश्चित थी।

क्या रहस्य था ट्रैपर की विधि का?

भौतिकी के एक साधारण नियम का ज्ञान। यह ठीक है कि हवा मैदान के जलते भाग से पथिकों की ओर बह रही थी, पर आग के आगे-आगे, उसके निकट, हवा का विपरीत बहाव भी होना चाहिए था। आग से गर्म होकर हवा हल्की हो जाती है और ऊपर उठने लगती है। रिक्त स्थान को भरने के लिए मैदान के दूसरे हिस्सों से ताजी हवा का आग की ओर बढ़ना शुरू हो जाता है। इसीलिए आग की सीमा के पास

हवा का खिंचाव लपटों की ओर होता है। आग तभी जलानी चाहिए, जब असली आग पर्याप्त निकट आ जाये, अर्थात् जब असली आग की ओर हवा का खिंचाव महसूस होने लगे। इसलिए ट्रैपर जल्दीबाजी नहीं कर रहा था; वह शान्त खड़ा आवश्यक क्षण की प्रतीक्षा कर रहा था। यदि असली आग की ओर हवा का खिंचाव महसूस करने के बाद थोड़ा वह आग लगा देता, तो आग उल्टी उन्हीं की ओर बढ़ने लगती और लोगों के सामने मरने के सिवा कोई चारा नहीं बचता। आग लगाने में देर भी नहीं की जा सकती थी; असली आग काफ़ी निकट आ जाती।

उबलते पानी से पानी उबालना

एक छोटी सी शीशी में पानी भरकर आग पर चढ़ी पतीली के शुद्ध पानी में इस प्रकार डुबाइये कि शीशी पतीली की पेंदी को स्पर्श न करे। इसके लिए आपको शीशी महीन तार से बाँधकर लटकानी पड़ेगी। क़ायदे से, जब पतीली का पानी खौलने लगेगा, शीशी के पानी को भी खौलने लगना चाहिए। पर आज जितनी मर्जी इंतज़ार कर सकते हैं; ऐसा नहीं होगा। शीशी के भीतर पानी गर्म होगा, बहुत गर्म हो जायेगा, पर खौलेगा नहीं। खौलता पानी इतना गर्म नहीं होता कि पानी को खौला सके।

निष्कर्ष आशातीत है, पर ऐसा होगा – यह पहले से कहा जा सकता था। पानी को खौलाने के लिए 100 सेण्टीग्रेड तक उसे गर्म करना ही पर्याप्त नहीं है : उसे इतना और अतिरिक्त ताप देना होगा कि वह एक समुच्चय अवस्था से दूसरी (वाष्प की अवस्था) में आ जाये।

शुद्ध जल 100 सेण्टीग्रेड पर खौलने लगता है; साधारण परिस्थितियों में आप उसे जितना चाहें, गर्म कर सकते हैं; उसका तापक्रम इस बिन्दु से ऊपर नहीं उठेगा। अर्थात ताप का स्रोत, जिससे आप शीशी का पानी गर्म कर रहे हैं, 100 सेण्टीग्रेड तापक्रम पर है; इसलिए वह शीशी के पानी को इससे अधिक गर्म नहीं कर सकता। जब दोनों बर्तनों में स्थित पानी का तापक्रम समान (100 सेण्टीग्रेड) हो जायेगा, तब पतीली के पानी से शीशी के पानी की ओर ताप का संचार बन्द हो जायेगा।

अतः शीशी के पानी को वाष्प में परिणत करने के लिए अतिरिक्त ताप उसे उपरोक्त विधि द्वारा नहीं दिया जा सकता (100 सेण्टीग्रेड तक गर्म किये गये एक ग्राम पानी को वाष्प में परिणत करने के लिए 500 कैलोरी अतिरिक्त ताप देना पड़ता है)। यही कारण है कि शीशी का पानी पतीली में गर्म हो जाता है, पर खौलता नहीं।

यहाँ प्रश्न उठ सकता है :

पतीली के पानी और शीशी के पानी में आखिर अन्तर क्या है? शीशी में भी तो वही पानी है; सिर्फ़ वह बाक़ी पानी से शीशे की दीवार द्वारा घिरा हुआ है। फिर उसके साथ वही क्यों नहीं होता, जो बाक़ी पानी के साथ होता है?

क्योंकि दीवार शीशी में स्थित पानी को उन संवहन धाराओं में भाग लेने से वंचित कर देती है, जो पतीली के पानी को हिलोड़ती रहती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उबलते पानी की गर्मी से पानी उबालना सम्भव नहीं है। पर यदि पतीली के पानी में मुट्ठी भर नमक घोल दिया जाये, तो बात दूसरी हो जाती है। नमकीन पानी सौ डिग्री पर नहीं,

कुछ अधिक पर खौलता है और इसीलिए वह शीशी के शुद्ध पानी को खौलाने की सामर्थ्य रखता है।

क्या पानी को बर्फ़ से खौलाया जा सकता है?

कुछ पाठक कहेंगे : ''यदि इस काम के लिए खौलता पानी बेकार है, तो फिर बर्फ़ की क्या बात की जा सकती है!'' पर उत्तर देने में जल्दीबाजी न करें। बेहतर होगा कि एक प्रयोग करें; उसी शीशी के साथ, जिसका आप अभी-अभी प्रयोग कर चुके हैं। शीशी को आधी दूरी तक पानी से भर दीजिए और नमकीन खौलते पानी में डुबा दीजिए। जब शीशी में पानी खौलने लगे, उसे पतीली से निकाल लीजिए और पहले से तैयार किये गये एक डाट से उसका मुँह अच्छी तरह बन्द कर दीजिए। अब शीशी को औंधा लटका कर थोड़ा इन्तजार करें। जब भीतर पानी का खौलना बन्द हो जाये, तो उसकी पेंदी पर थोड़ा बर्फ़ रखें, या चित्र 87 की भाँति उस पर ठण्डा पानी डालें, – और आप देखेंगे कि पानी खौलने लगा है... बर्फ़ ने वह कर दिया जो खौलता पानी नहीं कर सका। बात और भी रहस्यमय लगेगी, जब आप शीशी छूकर देखेंगे कि वह कुछ विशेष गर्म नहीं है, पर पानी खौल रहा है।

दरअसल बर्फ़ शीशी की दीवारों को ठण्डा कर देता है और परिणामस्वरूप भीतर का वाष्प संघनित होकर पानी की बूँदों में परिणत हो जाता है। और चूँकि शीशी में से हवा पानी खौलाते वक्त ही निकल गयी थी, इसलिए उसके भीतर स्थित पानी पर दबाव बहुत कम रह जाता है। कम दबाव पर द्रव आवश्यक तापक्रम से कम पर ही खौलने लगता है। यही कारण है कि शीशी का पानी ठण्डा होने पर भी खौलता रहता है।

यदि शीशी की दीवारें काफ़ी पतली होंगी, तो वाष्प के हठात संघनन से विस्फोट हो जा सकता है : वाह्य हवा भीतर से हवा का प्रतिरोध न पाकर शीशी को दबाव से तोड़ देगी (इसीलिए इसे सही माने में विस्फोट नहीं कहा जा सकता)। बेहतर होगा यदि आप गोल पेंदी की शीशी (जैसे उन्नतोदर पेंदी वाले फ्लास्क) के साथ प्रयोग करेंगे। शीशी की गुंबजाकार पेंदी बाह्य हवा के दबाव को सहन कर लेगी।

आप एक दूसरा प्रयोग भी कर सकते हैं, जिसमें किसी दुर्घटना का डर नहीं है। एक टिन के डिब्बे में थोड़ा पानी खौलाकर उसका डाट अच्छी तरह बन्द कर लीजिए और उस पर ठण्डा पानी उड़ेलिये। वाष्प से भरा डिब्बा वाह्य हवा के दबाव से पिचक जायेगा, क्योंकि भीतर का वाष्प ठण्डा होकर पानी में परिणत हो जायेगा। डिब्बा पिचककर इस तरह टेढ़ा-मेढ़ा हो जायेगा, जैसे उस पर हथौड़े चलाये गये हों (चित्र 88)।

Title code UPHIN44502/24-10-2013

बिन पुस्तक जीवन ऐसा
बिन खिड़की घर हो जैसा

अनुराग पुस्तकालय

मनोरंजक, ज्ञानवर्द्धक, उत्कृष्ट पुस्तकों का संग्रह, कला, साहित्य, संस्कृति, विज्ञान, खेलों आदि पर रोचक किताबें और पत्र-पत्रिकाएँ, प्रेरक जीवनियाँ, देश-विदेश का चुनिन्दा बढ़िया साहित्य

अनुराग ट्रस्ट

सोमवार से शनिवार, 12 से 8 बजे तक
डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020

अनुराग ट्रस्ट की दिलचस्प किताबें पढ़ो!

पुस्तक	लेखक	मूल्य
धरती और आकाश	अ. वोल्कोव	120.00
कजाकी	प्रेमचन्द	35.00
नीला प्याला	अरकादी गैदार	40.00
सच से बड़ा सच	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	20.00
चींटी और अन्तरिक्ष यात्री	अ. मित्यायेव	35.00
अन्धविश्वासी शेकी टेल	सेर्गेई मिखाल्कोव	20.00
चलता-फिरता हैट	एन.नोसोव, होल्गर पुक्क	20.00
दियांका-टॉमचिक		20.00
गधा और ऊदबिलाव	मक्सिम गोर्की, सेर्गेई मिखाल्कोव	20.00
गुफा मानवों की कहानियाँ	मैरी मार्स	20.00
हम सूरज को देख सकते हैं	मिकोला गिल,दायर स्लावकोविच	20.00
मुसीबत का साथी	सेर्गेई मिखाल्कोव	20.00
आकाश में मौज-मस्ती	चिनुआ अचेबे	20.00
आश्चर्यलोक में एलिस	सर्वान्तेस	30.00
जिन्दगी से प्यार	जैक लण्डन	30.00
अजीबोगरीब किस्से	होल्गर पुक्क	15.00
झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई (नाटक)	वृन्दावनलाल वर्मा	30.00
गुल्ली-डण्डा	प्रेमचन्द	20.00
रामलीला	प्रेमचन्द	20.00
लॉटरी	प्रेमचन्द	20.00
तोता	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15.00
पोस्टमास्टर	रवीन्द्रनाथ टैगोर	15.00
काबुलीवाला	रवीन्द्रनाथ टैगोर	20.00
मनमानी के मजे	सेर्गेई मिखालोव	20.00
आम जिन्दगी की मज़ेदार कहानियाँ	होल्गर पुक्क	15.00

और भी ढेर सारी मज़ेदार किताबें

अनुराग ट्रस्ट के सभी प्रकाशनों के मुख्य वितरक — जनचेतना, डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020
जनचेतना, जाफरा बाजार, गोरखपुर-273001